शिक्षा का अधिकार

कृषि विज्ञान

7

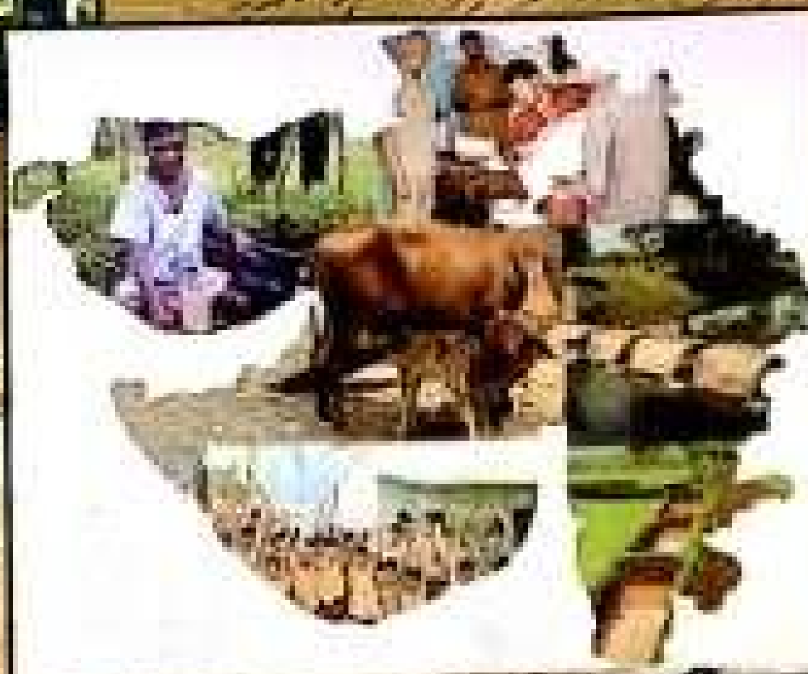

निःशुल्क वितरण हेतु

2016-2017

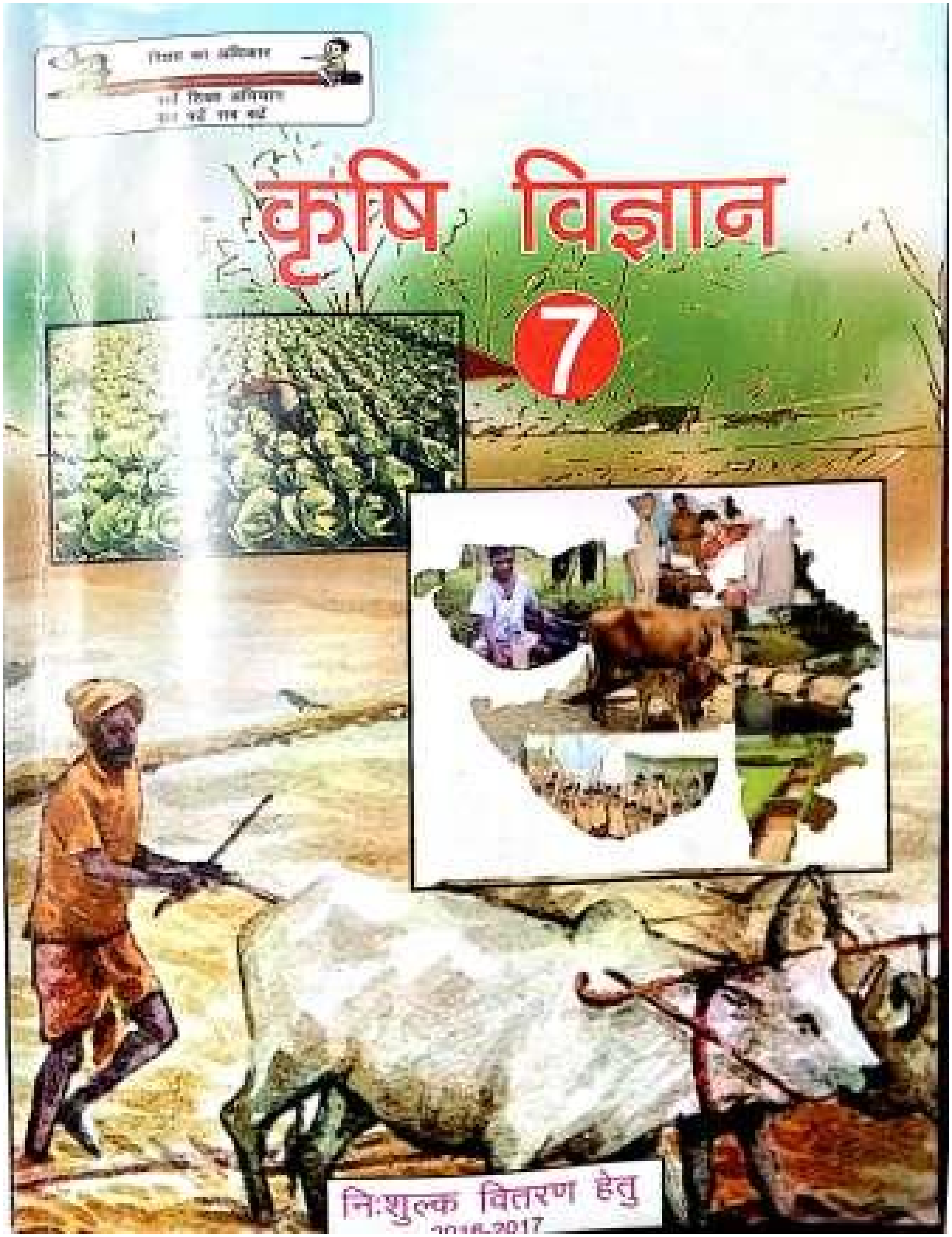
कृषि विज्ञान
7
नि:शुल्क वितरण हेतु

विषय-सूची

. कृषि-विज्ञान 7
इकाई1:मृदा विन्यास
इकाई2:भू-क्षरण
इकाई3:भू-परिष्करण
इकाई4:उर्वरकों के प्रकार एवं मृदा परीक्षण
इकाई5:सामान्य फसलें
इकाई6:बागवानी एवं वृक्षारोपण
इकाई7:फल परिरक्षण
इकाई8:प्राकृतिक आपदाएं

कृषि विज्ञान

(कक्षा 7)

E-BOOKS DEVELOPED BY

1. Dr.Sanjay Sinha Director SCERT,U.P,Lucknow
2. Ajay Kumar Singh J.D.SSA,SCERT,Lucknow
3. Alpa Nigam (H.T) Primary Model School, Tilauli Sardarnagar,Gorakhpur
4. Amit Sharma (A.T) U.P.S, Mahatwani ,Nawabganj, Unnao
5. Anita Vishwakarma (A.T) Primary School ,Saidpur,Pilibhit
6. Anubhav Yadav (A.T) P.S.Gulariya,Hilauli,Unnao
7. Anupam Choudhary (A.T) P.S,Naurangabad,Sahaswan,Budaun
8. Ashutosh Anand Awasthi (A.T) U.P.S,Miyanganj,Barabanki
9. Deepak Kushwaha (A.T) U.P.S,Gazaffarnagar,Hasanganz,unnao
10. Firoz Khan (A.T) P.S,Chidawak,Gulaothi,Bulandshahr
11. Gaurav Singh (A.T) U.P.S,Fatehpur Mathia,Haswa,Fatehpur
12. Hritik Verma (A.T) P.S.Sangramkheda,Hilauli,Unnao
13. Maneesh Pratap Singh (A.T) P.S.Premnagar,Fatehpur
14. Nitin Kumar Pandey (A.T) P.S, Madhyanagar, Gilaula , Shravasti
15. Pranesh Bhushan Mishra (A.T) U.P.S,Patha,Mahroni Lalitpur
16. Prashant Chaudhary (A.T) P.S.Rawana,Jalilpur,Bijnor
17. Rajeev Kumar Sahu (A.T) U.P.S.Saraigokul, Dhanpatganz ,Sultanpur
18. Shashi Kumar (A.T) P.S.Lachchhikheda,Akohari, Hilauli,Unnao
19. Shivali Gupta (A.T) U.P.S,Dhaulri,Jani,Meerut
20. Varunesh Mishra (A.T) P.S.Madanpur Paniyar,Lambhua,Sultanpur

इकाई - 1मृदा विन्यास

- मृदा विन्यास का अर्थ ।
- मृदा विन्यास के प्रकार ।
- रन्ध्रावकाश का कृषि में महत्त्व ।
- उर्वरकों का मृदा पर कुप्रभाव ।
- मृदा जल ।
- मृदा जल के प्रकार ।
- मृदा जल का भूमि में संरक्षण ।
- वर्षा के जल को नष्ट होने से बचाने के उपाय ।

मृदा विन्यास का अर्थ

हम लोग जान चुके हैं कि मृदा, खनिजों एवं चट्टानों के टूटने-फूटने एवं उनके बारीक कणों से बनी है। इन कणों को बालू, सिल्ट एवं मृत्तिका कहते हैं।ये कण प्राय: आकार में गोलाकार होते हैं एवं मृदा में विभिन्न प्रकार से वितरित और सजे हुए होते हैं। ``**मृदा कणों के इस प्रकार के वितरण या सजावट को मृदा विन्यास या मृदा संरचना कहते हैं ।''**

मृदा विन्यास का तात्पर्य मृदा कण समूहों से है अर्थात मृदा कण एक दूसरे से किस प्रकार मिले हुए होते हैं। मृदा कणों के आकार की तरह मृदा विन्यास भी मृदा में जल, वायु एवं पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्त्वों के संचार को प्रभावित करता है जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति प्रभावित होती है। किसान खेत में जो भी जुताई, निराई, गुड़ाई इत्यदि कार्य करता है,उसका सम्बन्ध मृदा विन्यास से होता है अर्थात भू-परिष्करण क्रियायें मृदा विन्यास को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं ।

मृदा विन्यास का बीजों के अंकुरण पर प्रभाव

जुताई, गुड़ाई,निराई,पाटा चलाना आदि क्रियाआें द्वारा मृदा कण एक दूसरे से अलग एवं ढीले हो जाते हैं और उनके गठन एवं समूहों में परिवर्तन आ जाता है ।भू-परिष्करण क्रियाआें द्वारा मृदा कणाकार (टेक्स्चर) बहुत ही कम प्रभावित होता है जो भी परिवर्तन होता है वह मृदा विन्यास या गठन में होता है, जिससे मृदा उर्वरता एवं फसल उत्पादन बहुत अधिक प्रभावित होता है ।

क्रिया कलाप

विद्यालय के प्रांगण में1-1 वर्ग मीटर की दो क्यारियों का चयन करें। एक क्यारी की ग़ड़ाई कर मिट्टी को भुरभुरी करें ,और दूसरी क्यारी की गुड़ाई ना करें। ,अब दोनों क्यारियों में ,अनाज के 100-100 बीज बो कर हल्कर पानी डाल दें। 7-10 दिन के ,अन्दर ,आप देखेंगे कि भुरभुरी की हुई क्यारी में लगभीग सभी बीज उगे हुए है। बिना गुड़ाई वाली क्यारी में तुलनात्मक रूप से कम बीज उगे हैं। ऐसा क्यों ? जैसा कि हम लोग भली भाँति जानते हैं कि यदि किसी खेत को वर्ष भर परती छोड़ दिया जाये तो उसकी मिट्टी कठोर हो जाती है ,और खरपतवार की मात्रा बढ़ जाती है। उस खेत में जुताई एवं गुड़ाई कठिनाई से होती है। इस प्रकार की मिट्टी में बुवाई करने पर बीजों का जमाव (,अंकुरण) एवं वृद्धि कम होती है। इसका मुख्य कारण मृदा विन्यास निम्न स्तर का होना है। गुड़ाई किए हुए खेत से लिए गये नमूने में ,अंकुरण ,अच्छा होता है क्योंकि उसकी मिट्टी ढीली एवं भुरभुरी होता है। मृदा कणों के बीच खाली स्थान में जल, वायु एवं ,आवश्यक पोषक तत्त्व उपलब्ध रहते हैं। बीजों के ,अंकुरण एवं पौधों की वृद्धि के लिए ,अनेक अनुकूल दशाओं की ,अवश्यकता होती है जो ,अच्छे मृदा विन्यास के होने पर ही सम्भव होता है।

विशेष- मृदा विन्यास प्रभावित होता है-

भू-परिष्करण (जुताई,गुड़ाई,निराई आदि), से

कार्बनिक खादों का प्रयोग , से

चूना, जिप्सम एवं अन्य भूमि-सुधारकों का प्रयोग , से

फसल-चक्र , द्वारा

मिट्टी की दशा एवं किस्म , से

उर्वरकों के प्रयोग तथा

जल निकास से।

मृदा विन्यास के प्रकार

क्रिया कलाप - आप सुबह -सुबह अपने स्कूल में प्रार्थना करते समय पंक्तियों में सीधे खड़े होते हैं। यदि सभी बच्चे एक साथ पंक्ति में सटकर खड़े हो जायें तो एक स्तम्भाकार आकृति बन जायेगी। इस आकृति में एक बच्चा अपने चारों तरफ चार बच्चों को छूता है। इसी प्रकार यदि आप तिरछी लाइन बनाकर आपस में सटकर खड़े हो जायें तो एक बच्चा अपने चारों तरफ छ: बच्चों को छूता है। इस प्रकार एक तिर्यक आकृति बन जाती है । यदि आप सभी कई झुण्ड बनाकर गोल आकृति में खड़े हो जायें और एक झुण्ड दूसरे झुण्ड को छूते

हुए सीधी लाइन बना लें तो एक झुण्ड अपने चारों तरफ चार झुण्डों को छुयेगा है तथा एक और आकृति बन जायेगी।

मृदा में पाये जाने वाले कण (बालू, सिल्ट एवं मृत्तिका),जो आकार में गोल होते हैं, चार प्रकार से वितरित एवं सजे होते हैं।

1. स्तम्भी विन्यास - इस प्रकार के विन्यास में मृदा कण आपस में एक दूसरे से चार स्थानों (बिन्दुओं) पर मिलते हैं जिसके कारण मृदा कणों के बीच बहुत अधिक जगह खाली रहती है जिसे रन्ध्रावकाश कहते हैं । रन्ध्रावकाश का आयतन लगभग 50 प्रतिशत होता है। इसका अनुपात कणों के छोटे या बड़े होने पर निर्भर करता है । इस प्रकार के विन्यास वाली मिट्टी अत्यन्त भुरभुरी एवं मुलायम होती है, जिसमें जल एवं वायु आसानी से प्रवेश करती है ।मृदा में लाभकारी जीवाणुओं की क्रियाशीलता अधिक होती है। यह मृदा उपजाऊ एवं खेती के लिए उत्तम होती है।

चित्र संख्या 1.2 स्तम्भी विन्यास

2.तिर्यक (तिरछा) विन्यास - इस प्रकार के विन्यास में प्रत्येक कण एक दूसरे को छ: स्थानों पर छूता है तथा तिरछी पंक्तियों में व्यवस्थित होता है जिससे कणों के बीच रन्ध्रावकाश कम हो जाता है। इसलिए जल एवं वायु का संचार बहुत कम होता है जिसके कारण फसलों एवं पौधों की जड़ों की वृद्धि अच्छी नहीं होती है फलत: पैदावार कम होती है।

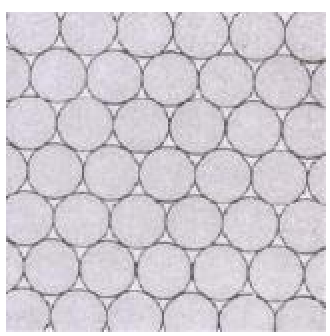

चित्र संख्या 1.3 तिर्यक विन्यास

3.संहत (सघन) विन्यास - सघन विन्यास में मृदा के छोटे-छोटे कण तिरछी रचना के बीच में आ जाते हैं। इस प्रकार की मिट्टी में जल एवं वायु का प्रवेश (संचार) बहुत ही कठिनाई से

होता है।

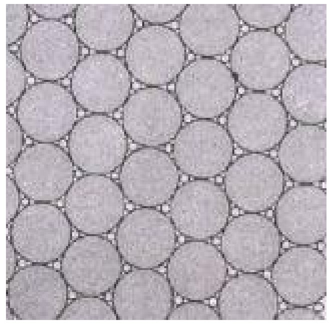

चित्र संख्या 1.4 संहत विन्यास

4. दानेदार (कणीय) विन्यास -इस विन्यास में मृदा के सूक्ष्म कण आपस में मिलकर एक झुण्ड बनाते हैं और इस झुण्ड की एक इकाई अपने पास की चार इकाइयों (झुण्डों) को छूती है। यह विन्यास सर्वोत्तम माना जाता है क्योंकि छोटे-छोटे कणों के बीच (एक झुण्ड में) रिक्त स्थान तो होता ही है साथ-ही साथ बड़े-बड़े कणों (झुण्डों) के बीच भी रिक्त स्थान होता है चिकनी दोमट एवं दोमट मृदाओं में इस प्रकार का विन्यास अधिक पाया जाता है

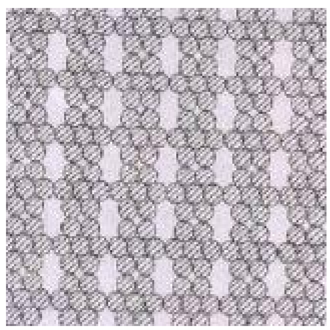

चित्र संख्या 1.5 कणीय विन्यास

रन्ध्रावकाश का महत्व - मृदा में ठोस पदार्थो से रहित जो खाली स्थान होता है उसे मृदा रन्ध्र या रन्ध्रावकाश कहते हैं। रन्ध्रावकाश मुख्यतया मिट्टी के कणों के आकार पर निर्भर करता है । मोटे कणों वाली मृदा में रन्ध्रावकाश कम तथा बारीक या छोटे कणों वाली मृदा में रन्ध्रावकाश अधिक होता है । आइये इसका अवलोकन करें ।

क्रिया कलाप 2

*दो समान आकार के बीकर लीजिए ।

*एक बीकर में आधे भाग तक बालू भर दीजिए ।

*दूसरे बीकर में आधे भाग तक चिकनी मिट्टी भर दीजिए ।

*पानी के आयतन को माप कर दोनो बीकरों में इतना डलिए कि ऊपरी सतह तक आ जाये ।

*क्या आप बता सकते हैं कि किस बीकर में पानी अधिक भरा गया ?

दोनों का तुलनात्मक अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि चिकनी मिट्टी वाले बीकर में अधिक पानी भरा गया जबकि बालू वाले बीकर में कम इससे सिद्ध होता है कि बड़े कणों वाली मिट्टी (बलुई) में कम तथा छोटे कणों वाली मिट्टी (चिकनी) में अधिक रन्ध्रावकाश होता है । आपने खेतों में पौधों को सूखते हुए देखा होगा, ऐसा क्यों होता है? जब पौधों को समय पर पानी नहीं मिलता तो वे सूखने लगते हैं। रन्ध्रावकाश पर्याप्त होने पर जल,वायु एवं पोषक तत्त्व मृदा में उपलब्ध रहते हैं। इसके विपरीत रन्ध्रावकाश कम होने पर पौधों का विकास कम होता है अर्थात मिट्टी में रन्ध्रावकाश होना अच्छी पैदावार के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है क्योंकि -

1.रन्ध्रावकाश पौधों को समुचित जल, वायु एवं पोषक तत्त्व उपलब्ध कराने में सहायता करता है ।

2.मृदा के लाभदायक जीवों की वृद्धि में सहायक होता है ।

3.पौधों की बढ़वार के लिए आवश्यक घुलनशील तत्त्वों की वृद्धि में सहायता करता है ।

4.जड़ों के समुचित विकास में सहयोग करता है ।

मृदा जल

प्रकृति में पाया जाने वाला जल रंगहीन,गंधहीन, और पारदर्शी होता है। हम लोग जितने हरे-भरे पेड़-पौधे एवं लहलहाती फसलें देखते हैं, पानी न मिलने पर सूख जाती हैं। इसी तरह मनुष्यों एवं पशुओं का जीवन भी पानी के बिना सम्भव नहीं है । इससे यह स्पष्ट होता है कि जल का पेड़-पौधों, पशुओं एवं हमारे जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है । इसीलिए कहा गया है कि ``**जल ही जीवन है** ''।

प्रकृति में जल,पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं एवं वायुमण्डल में निरन्तर ठोस, द्रव एवं गैस के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्रवाहित होता रहता है। क्या आप बता सकते हैं कि मृदा जल क्या है ? **मिट्टी या मृदा में पाये जाने वाले जल को ही मृदा जल कहते हैं।** जल पौधों का एक मुख्य भाग है । जल एक अच्छा घोलक है। जो पौधों के आवश्यक पोषक तत्त्वों के लिए एक वाहक के रूप में कार्य करता है । सूक्ष्म जीवों एवं पेड़-पौधों की वृद्धि, जैव पदार्थ का सड़ना तथा सभी रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं के लिए जल अत्यन्त आवश्यक है ।

विशेष - प्रकृति में जल कभी नष्ट नहीं होता है । यह एक रूप से दूसरे रूप में बदल जाता है । वास्तव में महासागर जल का विशाल एवं असीमित भण्डार है । वहाँ से जल जल-वाष्प, बादल, वर्षा एवं हिमपात के रूप में पृथ्वी को प्राप्त होता है । जल के इस प्रकार ठोस, द्रव एवं गैसीय अवस्था में परिवर्तन को जल-चक्र कहते हैं और जल चक्र के अध्ययन को जल विज्ञान (हाइड्रोलोजी) कहते हैं ।

मृदा जल के प्रकार

मृदा जल मुख्य रूप से तीन रूपों में पाया जाता है -

1. गुरूत्वीय जल (ग्रेवीटेशनल वाटर)

2. केशिका जल (कैपिलरी वाटर)

3. आर्द्रताग्राही जल (हाइग्रोस्कोपिक वाटर)

1.गुरूत्वीय जल

क्रिया कलाप

* जैविक पदार्थ युक्त मिट्टी से भरा गमला लीजिये ।

* गमले में नीचे जल निकालने के लिए एक छेद हो ।

* गमले को ऊपर तक जल से भर दें ।

थोड़ी देर बाद आप देखेंगे कि गमले का पूरा जल छेद से बाहर निकल गया । क्या आप बता सकते हैं कि यह जल बाहर क्यों निकल गया ?मिट्टी में जो रन्ध्रावकाश होता है उसमें पानी भरने के बाद अतिरिक्त जल को रोकने की शक्ति मृदा में नहीं होती जो पृथ्वी के **गुरूत्वाकर्षण बल के कारण नीचे बह जाता है** अत: पौधों के लिए अप्राप्य होता है । उसे गुरूत्वीय जल कहते हैं । इस प्रकार वर्षा तथा सिंचाई के बाद जो जल मृदा के नीचे चला जाता है और मिट्टी के कणों के बीच रन्ध्रावकाश में नहीं रूक पाता उसे गुरूत्वीय जल या स्वतंत्र जल कहते हैं ।

2. केशिका जल

क्रिया कलाप - जैसा कि आपने गमले में पानी का अवलोकन किया।गमले में जितना पानी रूक जाता है वह कणों के बीच रिक्त स्थान में रूका होता है । यह जल केशिका नलिकाओें में भरा रहता है जो नीचे नहीं जा पाता है । केशिका नलिकायें कणों के बीच बहुत पतली-पतली नलिकायें होती हैं जो प्राय: ऊपर से नीचे की ओर या मृदा की पर्त के समानान्तर भी होती है। गुरूत्वाकर्षण बल के विरूद्ध पर्याप्त जल मिट्टी के रन्ध्रावकाश में

रूका रहता है जिसे **केशिका या केशीय जल** कहते हैं । इस प्रकार के जल में पौधों के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व घुले होते हैं । यह जल विलयन के रूप में पौधों को सुगमता से प्राप्त हो जाता है अत: पौधों के लिए अत्यन्त लाभदायक होता है ।

3.आर्द्रताग्राही जल

क्रिया कलाप

* एक कपड़ा लेकर उसे पानी में डुबाऐं ।

* कपड़े को निकाल कर अच्छी प्रकार निचोड़ लें और धूप में सूखने के लिए फैलाएँ।

* थोड़ी देर (आधे घंटे) बाद कपड़े को उठाकर देखने पर पता चलता है कि कपड़ा पूरी तरह सूखा नहीं है फिर भी आप कपड़े को पुन: निचोड़ कर देखें तो जल नहीं निकलता ।

क्या आप बता सकते हैं कि जल क्यों नहीं निकलता ? यह जल कपड़ों में धागों के बीच चिपका (जकड़ा) रहता है । इसी तरह मिट्टी में कुछ जल अवश्य रहता है लेकिन वह मृदा कणों के मध्य इतनी मजबूती से एक पतली परत के रूप में जकड़ा रहता है कि पौधों को प्राप्त नहीं होता। इस प्रकार के जल को आर्द्रताग्राही जल कहते हैं ।अत: सिंचाई द्वारा जो जल फसलों को दिया जाता है उसका बहुत कम भाग पौधों को प्राप्त होता है । अधिकांश भाग वाष्पन या रिसाव द्वारा बेकार चला जाता है या गुरूत्वीय जल एवं आर्द्रताग्राही जल के रूप में पौधों को अप्राप्य होता है ।

मृदा जल का भूमि में संरक्षण

फसलों की अच्छी पैदावार के लिए मृदा में जल संरक्षण का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि पौधों की वृद्धि के लिए जल का निरन्तर उपलब्ध रहना आवश्यक होता है। मृदा में जल संरक्षण की अनेक विधियाँ है ।

1.जुताई, गुड़ाई एवं निराई करके - खेतों की जुताई एवं निराई-गुड़ाई करने से मृदा में बनी केशीय नलिकायें टूट जाती हैं एवं नीचे एक ऐसी पर्त बन जाती है जिससे नीचे का जल भूमि के ऊपरी सतह तक नहीं आ पाता है । इस प्रकार जल मृदा में सुरक्षित रहता है ।

2. जुताई के बाद भारी पाटा लगाना - पाटा लगाने से भूमि के ऊपरी भाग में एक कड़ी परत बन जाती है । जिससे मृदा जल की हानि वाष्प के रूप में नहीं हो पाती है ।

चित्र संख्या 1.6 पाटा लगाना

3. जैविक खादों का अधिकधिक प्रयोग - खेतों में जैविक खादों का अधिक प्रयोग करने से मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ा जाती है । जिससे मृदा में पानी अधिक रूकता है । इस प्रकार जिस मिट्टी में जैविक पदार्थ जितना अधिक होगा उसमें जल - धारण क्षमता भी उतनी ही अधिक होगी ।

4. कृत्रिम बिछावन या पलवार (मल्चिंग) द्वारा - मल्चिंग का अर्थ है मृदा के ऊपरी सतह को ढकना या मृदा केशिका नलिकाआें को तोड़कर मल्च बनाना। मल्चिंग का प्रयोग करने से सूर्य का प्रकाश सीधे भूमि पर नहीं पड़ता जिससे वाष्पोत्सर्जन कम होता है और जल का संरक्षण हो जाता है । मल्चिंग के रूप में धान का पुआल, ज्वार, बाजरा, अरहर, या अन्य फसलों के डण्ठल आदि प्रयोग में लाये जाते हैं ।

5. फसल चक्र द्वारा- पतली एवं कम चौड़ी पत्ती वाली फसल उगाने से वाष्पन कम होता है। फसल चक्र में ऐसी फसलों का भी प्रयोग करना चाहिए जिन्हें कम पानी की आवश्यकता होती है तथा उनकी जड़ें कम फैलती हैं जैसे - सनई, मूंग, चना,एवं मटर आदि ।

वर्षा के जल को नष्ट होने से बचाने के उपाय

घनघोर वर्षा के बाद भी भूमि पर पानी नहीं ठहरता है। आखिर वह जल कहाँ चला जाता है वास्तव में जब वर्षा होती है तो जल का अधिकांश भाग बहकर दूर नदी, नालों, तालाबों, पोखरों में चला जाता है। कुछ ही भाग रिसकर मृदा के नीचे जाता है जिसका उपयोग वानस्पतियों द्वारा स्वयं कर लिया जाता है। इसलिए वर्षा के जल को नष्ट होने से बचाने के जो उपाय किये जाते हैं निम्नलिखित हैं -

1.खेत को समतल एवं मेंड़बन्दी करना - खेत को समतल करके उसके चारो ओर ऊँची-ऊँची मेंड़ बनाकर वर्षा के जल को बाहर जाने से रोकते हैं तथा जल निकास के लिए पानी को धीरे-धीरे खेत से बाहर निकालते हैं ।

2. खेतों की गहरी जुताई करना - गर्मी के दिनों में खेतों की गहरी जुताई करने से भूमि में जल का अवशोषण अधिक होता है और मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ाने से मृदा में जल अधिक रूकता है जिससे वर्षा का जल बहने से कम नष्ट होता है ।

3. खेत के ढाल के विपरीत जुताई करना - ढालू खेत में ढाल के विपरीत जुताई करने से वर्षा का जल तेजी से बहने नहीं पाता और उसे भूमि में रूकने का समय अधिक मिलता है, जिससे मृदा जल का ह्रास कम होता है।

4. छोटे-छोटे बाँधों का निर्माण - ढालू भूमि पर वर्षा के जल को रोकने के लिए निचले भागों में छोटे- छोटे बन्धे बनाकर वर्षा जल को बहने से रोका जाता है । इन बाँधों में रूके हुए जल का सिंचाई के रूप में उपयोग करके फसल उत्पादन किया जाता है ।

5. वृक्षारोपण- अधिक से अधिक वृक्ष एवं घास लगाकर वर्षा के जल को तीव्र गति से बहने से रोका जा सकता है । इसके अतिरिक्त वनों में,वृक्षों के बीच खाली जगह में तथा कम प्रकाश में उगने वाली फसलों को उगाकर भी वर्षा जल को नष्ट होने से बचाया जा सकता है ।

6. झीलों, तालाबों एवं पोखरों की सफाई एवं पर्याप्त गहराई बनाये रखना -वर्षा होने से पहले जलाशयों में उगे हुए खरपतवारों तथा निचली सतह पर जमी मिट्टी को बाहर निकाल देते हैं । जिससे वर्षा का जल अधिक से अधिक एकत्र हो सके। आवश्यकता पड़ने पर इसी जल से खेतों की सिंचाई करते हैं । इस संदर्भ निम्नलिखित कहावत पूर्णत: सत्य है ।

``वर्षा के जल का संचय, भरे रहें ताल ।

न रहे सूखा न पड़े अकाल'' ।।

7. छत जल (रूफ - टाप जल) संचय - कम वर्षा वाले क्षेत्रों में वर्षा जल को नष्ट होने से बचाने हेतु यह एक ऐसी विधि है जिसमें मकानों की छतों से गिरने वाले पानी को मकान के पास ही गड्ढे बनाकर एकत्र कर लेते हैं । जिसका उपयोग घरेलू कार्य एवं बागवानी हेतु करते हैं।

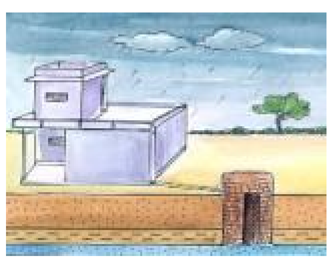

चित्र संख्या 1.7 छत जल संचय

अभ्यास के प्रश्न

1. सही उत्तर पर सही (✓) का चिन्ह लगाइये -

i .मृदा कणों का आकार होता है -

क)गोलाकार   ख)लम्बाकार

ग)वर्गाकार घ)चौड़ा

ii. केशिका जल होता है -

क)बहता हुआ जल

ख)स्थिर जल

ग)गुरूत्वाकर्षण बल के विरूद्ध मिट्टी में पाया जाने वाला जल

घ)तालाब का जल

iii. मृदा जल संरक्षण करते हैं -

क)कुँआ खोदकर

ख)तालाब खोदकर

ग)नाला बनाकर

घ)जुताई के बाद पाटा लगाकर

iv. दानेदार कणीय विन्यास होता है -

क)जब कण अलग - अलग होते हैं

ख)जब कण पानी में घुले होते हैं

ग)जब कण सूख कर ढेला बनाते हैं

घ)जब कण आपस में मिलकर एवं एक झुण्ड बनाकर दूसरे झुण्डों को चार स्थानों पर छूते हैं

v.तिर्यक विन्यास में प्रत्येक कण दूसरे कणों को कितने स्थानों पर छूता है -

क)दो   ख)चार

ग)छः   घ)आठ

2.रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

i) स्तम्भी विन्यास में मृदा कण एक दूसरे से ....स्थानों पर मिलते हैं । (दो /चार)

ii) जब जल वाष्प में परिवर्तित हो जाता है तो उसे ....अवस्था कहते हैं । (ठोस / गैस)

iii) ....को रन्ध्रावकाश कहते हैं।(मृदा के ठोस भाग / मृदा के खाली भाग)

iv) उर्वरकों के लगातार अधिक प्रयोग से मृदा ....हो जाती है ।(अच्छी / खराब)

v) पौधे ....को आसानी से ग्रहण करते हैं ।(केशिका जल / आर्द्रताग्राही जल)

3.निम्नलिखित कथनों में सही पर सही (√) तथा गलत पर गलत (X)का चिन्ह लगाइये-

i) तिर्यक विन्यास में मृदा कण आपस में एक दूसरे को छ: स्थानों पर छूते हैं।

ii) जुताई, गुड़ाई, निराई करके मृदा में जल संरक्षण किया जाता है ।

iii) खेत की मेंड़ बन्दी करके वर्षा जल को नष्ट होने से बचाया जाता है ।

iv) जल एक अच्छा विलायक है ।

v) कार्बनिक पदार्थ का मृदा विन्यास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है ।

vi) रन्ध्रावकाश पौधों को समुचित पोषक तत्व पहुँचाने में सहायता करता है ।

vii) रूफ-टाप जल संचय वर्षा जल संचय की विधि नहीं है ।

4.निम्नलिखित में स्तम्भ `क' का स्तम्भ `ख' से सुमेल कीजिए।

स्तम्भ `क	**'स्तम्भ `ख'**
1.मृदा कण सजावट	जुताई
2.स्तम्भी विन्यास	केशिका जल
3.दानेदार कणीय विन्यास	रन्ध्रावकाश
4.मृदा में खाली जगह	पाटा लगाना
5.भूमि में नमी संरक्षण	कणों का आपस में मिलकर

	एक झुण्ड बनाना
6.गुरूत्वाकर्षण बल के विरूद्ध	कणों का चार स्थानों पर छूना
7.कृषि कार्य	मृदा विन्यास

5 Ii) प्रकृति में जल किन -किन रूपों में पाया जाता है ?

ii) मृदा कणों के चारों ओर महीन परत के रूप में पाये जाने वाले जल को क्या कहते हैं ?

iii) रन्ध्रावकाश किसे कहते हैं ?

iv) भूमि के ऊपरी सतह पर भरा हुआ जल नीचे क्यों चला जाता है ?

v) क्या जल को आपने ठोस अवस्था में देखा है उसका नाम लिखिए ?

vi) ``जल ही जीवन है" क्यों कहा जाता है ?

vii) रूफ-टाप जल संचय से वर्षा जल को नष्ट होने से बचाने के उपाय का चित्र बनाइये ।

viii) खेत की मेंड़ बन्दी करके वर्षा जल को नष्ट होने से बचाने के उपाय का चित्र बनाइये।

6. मृदा विन्यास को परिभाषित कीजिए।

7. मृदा विन्यास कितने प्रकार का होता है ? वर्णन कीजिए ।

8. मृदा जल को परिभाषित करते हुए उसके विभिन्न रूपों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।

9.वर्षा जल को नष्ट होने से बचाने के उपायों का वर्णन कीजिए ।

10.उर्वरकों के अधिक प्रयोग से भूमि में होने वाले हानिकारक प्रभावों का वर्णन कीजिए।

11. निम्नलिखित वर्ग पहेली में सही शब्दों को भरिए ।

ऊपर से नीचे

1.मृदा जल प्रकार

2.मृदा विन्यास

3.वर्षा जल संचय का उपाय

4.मृदा कणों के चारों ओर महीन परत के रूप में उपस्थित जल

बाँये से दाँये

5.मृदा में खाली जगह

6.जल का ठोस, द्रव एवं गैस में परिवर्तन

7.मृदा जल का नीचे बहने का कारण

		1 के		3 में	2 स	4 आ
5 रं		का		बं	ध	ता
6 ज		च				
7 गु		त्वा		र्ष		ही

प्रोजेक्ट कार्य

1)जुताई तथा निराई-गुड़ाई करके भूमि में नमी का संरक्षण करना ।

2)मेंड़बन्दी द्वारा वर्षा जल का संचय करना ।

back

इकाई - 2 भू-क्षरण

- भू-क्षरण की परिभाषा
- भू-क्षरण के प्रकार
- भू-क्षरण के रूप
- मृदा संरक्षण की परिभाषा एवं महत्व
- मृदा संरक्षण के उपाय

क्या आप जानते हैं बरसात के दिनों में जो पानी बहकर नदी एवं नालों में जाता है वह मटमैला एवं गंदला क्यों होता है? वास्तव में वर्षा के पानी के साथ-साथ भूमि की ऊपरी सतह के महीन कण पानी में घुलकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जमा होते हैं जिससे उस स्थान का कटाव होता है। आँधी या चक्रवात के आने पर भी मृदा कण ऊपर उठकर हवा के साथ उड़ते रहते हैं। इस से शुष्क एवं रेतीले क्षेत्र ज्यादा प्रभावित होते हैं ।

``भूमि के कणों का अपने मूल स्थान से हटने एवं दूसरे स्थान पर एकत्र होने की क्रिया को भू-क्षरण या मृदा अपरदन कहते हैं।''

* आपको जानकर आश्चर्य होगा कि भारत में उपलब्ध कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग आधा क्षेत्रफल जल एवं वायु क्षरण से प्रभावित है ।

* भू-क्षरण के कारण नदी, नालों व समुद्रों में रेत व मिट्टी जमा होने के कारण वे उथली हो रही हैं जिसके फलस्वरूप बाढ़ एवं पर्यावरण की समस्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है । जिससे धन,जन एवं स्वास्थ्य की हानि होती है।

* भू-क्षरण के फलस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता घट जाता है जो देश की अर्थ व्यवस्था कमजोर करती है ।

क्या कारण है कि आज नदी तल एवं समुद्र्तल ऊँचा होता जा रहा है पृथ्वी के अधिकांश भूभाग के डूबने का खतरा उत्पन्न हो गया है?इन सबका कारण भू-क्षरण है । भू-क्षरण अनेक कारकों (शक्तियों) द्वारा होता रहता है जैसे- वर्षा, वायु, गुरूत्वाकर्षण बल एवं हिमनद सबसे अधिक भू-क्षरण जल एवं वायु द्वारा होता है।

विशेष- पानी के साथ ऊपरी उपजाऊ मिट्टी बहकर नदी, नालों एवं समुद्र में चली जाती है । एक अनुमान के अनुसार एक हेक्टर खेत से लगभग 16.3 टन उपजाऊ मिट्टी प्रति वर्ष बह जाती है जिससे पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं ।

भू-क्षरण के प्रकार

भू-क्षरण दो प्रकार का होता है-

1. प्राकृतिक या सामान्य भू-क्षरण

2. त्वरित (मनुष्यकृत) भू-क्षरण

1.प्राकृतिक भू-क्षरण - यह क्षरण प्राकृतिक क्रियाआें द्वारा होता है । इसकी गति धीमी व विनाश रहित होती है । इसमें जितनी मिट्टी बनती है लगभग उतनी ही मिट्टी का कटाव होता है जिससे सन्तुलन बना रहता है । इसी के फलस्वरूप भूपटल पर पठार, मैदान, घाटियाँ एवं विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ बनती हैं।

2.त्वरित भू-क्षरण-चारागाहों में उगी घास की आनियमित चराई,वनों की अँधाधुंध कटाई, आदि से भू-सतह पर स्थित वनस्पतियाँ नष्ट हो जाती हैं जिसके कारण भू-क्षरण की गति तीव्र हो जाती है, इस प्रक्रिया को त्वरित भू-क्षरण कहते हैं।

भू-क्षरण के रूप

भू-क्षरण के कारक? भू-क्षरण की क्रिया वर्षा या वायु का मृदा से सम्पर्क होते ही प्रारम्भ होती है जैसे-जैसे वर्षा या वायु वेग घटता-बढ़ाता है वैसे-वैसे भू-क्षरण का रूप व प्रकार बदलता रहता है । भू-क्षरण मुख्य रूप से दो कारकों द्वारा होता है, जल एवं वायु के द्वारा होने वाले भू-क्षरण को क्रमश: जलीय भू-क्षरण एवं वायु भू-क्षरण कहते हैं।

1. जलीय भू-क्षरण - बरसात के दिनों में पानी के साथ बहती मिट्टी का अवलोकन करने पर आप पायेंगे कि ढालू भूमि में मिट्टी पानी के साथ बहकर पतली-पतली नालियाँ बनाती है या पुराने पेड़ों के जड़ों की मिट्टी बह जाने के कारण जड़ें नीचे तक दिखाई देने लगती हैं। ऐसा क्यों होता हैं ? यह सब जलीय भू-क्षरण के कारण होता है । यह निम्नलिखित प्रकार से होता है ।

i) वर्षा बूँद क्षरण - इस प्रकार के भू-क्षरण में वर्षा की बूँदे जब मृदा से टकराती हैं तो मिट्टी के कण बिखर (छिटक) जाते हैं। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि वर्षा की बूँदे मिट्टी के कणों को एक मीटर ऊँचा एवं एक मीटर दूर तक उछाल सकती है ।

चित्र संख्या- 2.1 वर्षा की बूँदो द्वारा भू-क्षरण

ii) परत भू-क्षरण - खेत से पानी बहते हुए धीरे-धीरे मृदा की ऊपरी परत को अपने साथ बहा ले जाता है। यह प्रक्रिया सामान्य रूप से दिखाई नहीं देती। खेत से बहता हुआ गंदा पानी प्रदर्शित करता है कि मृदा के ऊपरी भाग का कुछ अंश खेत के बाहर जा रहा है जिसमें मृदा के साथ-साथ पोषक तत्त्व भी होते हैं।

iii) अल्पसरिता भू-क्षरण - भूमि ढालू होने से या अत्यधिक वर्षा से पानी तेज धारा के रूप में बहता है तो बहता हुआ पानी छोटी-छोटी नलिकाओं का जाल बना देता है जिसे अल्पसरिता भू-क्षरण कहते हैं । ये नलिकायें जुताई-गुड़ाई के समय समाप्त हो जाती हैं। खेत को परती छोड़ने पर इस प्रकार का भू-क्षरण देखने को मिलता है ।

iv)खड्ड या अवनलिका भू-क्षरण-अल्पसरिता नलिकाओं पर ध्यान न देने से आगे चलकर ये आपस में जुड़ जाती है और गहरी एवं चौड़ी नालियों का रूप धारण कर लेती हैं। इनको भू-परिष्करण की क्रियाओं से समतल नहीं किया जा सकता है।

v) बीहड़ भू-क्षरण- जब वर्षा होती है तो नदियों के दोनों किनारों से वर्षा का जल बह-बह कर नदियों में आता है। इस जल के बहाव से भूमि में कटाव होता है। इससे भूमि में प्राकृतिक नालियाँ बन जाती हैं। आगे चलकर यही नालियां नाले एवं बीहड़ का रूप ले लेती हैं। इस प्रकार के भू-क्षरण को बीहड़ भू-क्षरण कहते हैं।

vi) नदी तट भू-क्षरण - पानी का बहाव नदियों के किनारों को काटता रहता है और बहाव का नया रास्ता बनाता रहता है। इससे नदियों के किनारे उपजाऊ भूमि नष्ट हो जाती है।

vii) पुलिन भू-क्षरण या समुद्रतट भू-क्षरण- समुद्र की तीव्र लहरें किनारे को लगातार काटती रहती हैं जिससे किनारे के पहाड़ व पेड़ पौधे टूट कर समुद्र में गिरते रहते हैं तथा गाद (सिल्ट) के इकट्ठे होने से पुलिन (बीच) बन जाते हैं । समुद्र की लहरों व ज्वार धाराओं द्वारा पुलिन क्षरण होता है ।

viii) हिमनद भू-क्षरण - यह ऊँचे व ठण्डे पहाड़ों पर होती है। जहाँ प्राय: बर्फ जमी रहती है। बड़ी-बड़ी हिम शिलायें अपने साथ चट्टाने व पत्थर बहाती चलती हैं।

ix) भूस्खलन भू-क्षरण - यह क्षरण पहाड़ों पर होता है। इसमें कमजोर चट्टानें अधिक ढलान के कारण दूर ढह जाती हैं जिससे निचली जगहों के खेत, सड़क व बस्ती आदि दब जाते हैं।

2. **वायु भू-क्षरण**

जब भूमि का क्षरण वायु द्वारा होता है तो उसे वायु भू-क्षरण कहते हैं । यह कम वर्षा एवं शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में होता है । जहाँ आमतौर पर तेज हवायें चलती हैं भूमि पर वनस्पतियों का आवरण नहीं होता है । ऐसी स्थिति में मृदा के छोटे-छोटे कण हवा के साथ अपने स्थान से हटकर कई किलोमीटर दूर उड़कर इकट्ठे हो जाते हैं। कभी-कभी आस-पास के खेतों में जमा होकर फसल को बर्बाद कर देते हैं ।

सैंडड्यून- रेतीली भूमि में तेज हवा के कारण कभी-कभी बालू के टीले (सैंडड्यून) बन जाते हैं जो वायु वेग के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित होते रहते हैं।

विशेष - आपने देखा होगा कि जब तेज हवा या आँधी आती है तो प्राय: रेत या मिट्टी के महीन कण (धूल) की एक पर्त जमा हो जाती है । कभी आपने सोचा यह कहाँ से आती है। यह वायु- क्षरण के कारण होता है ।

मृदा संरक्षण

मृदा, जल एवं वनस्पतियाँ प्रकृति की बहुमूल्य देन हैं जिनसे मनुष्य की बुनियादी आवश्यकतआें जैसे -भोजन,ईंधन,चारा आदि की पूर्ति होती है । अत: प्रकृति से प्राप्त इस धरोहर की रक्षा करना हम लोगों का परम कर्तव्य है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि मृदा सतह की एक इंच ऊपरी परत बनाने हेतु प्रकृति को 300 से 1000 वर्ष लगते हैं। परन्तु मृदा क्षरण द्वारा यह परत कुछ ही क्षणों या दिनों में बह जाती है । अत: इस प्रकृति प्रदत्त धरोहर को बचाने हेतु उचित मृदा संरक्षण विधियाँ अपनाना आवश्यक है। यदि भूमि पर घास व वनस्पतियाँ नहीं हैं तो भू-क्षरण अधिक होता है जिससे नदी,नालों में मिट्टी जमा होने के कारण उनकी जल धारण क्षमता घट जाती है और बाढ़ का कारण बनती है । मृदा कटाव को रोकने की प्रक्रिया को ही मृदा संरक्षण कहते हैं।

हमारे देश की कुल वर्षिक वर्षा का एक तिहाई पानी बहकर नदी नालों में चला जाता है । मृदा संरक्षण वह विधि है जिसमें मृदा उपयोग क्षमता का पूरा-पूरा लाभ उठाते हुए मृदा को क्षरण से बचाया जाता है ।

विशेष - अथर्ववेद में भी भूमि संरक्षण का वर्णन है । जो निम्न है -

1.हम सब इस पृथ्वी का सभी संसाधनो द्वारा बचाव (संरक्षण) करें उस मृदा का जो हमारे लिए फसल,फल,फूल व वृक्ष आदि पैदा करती है। (अथर्ववेद 12 : 1 : 19)

2.भूमि हमारी माता है,मै उसका पुत्र हूँ,जल हमारा पिता है । परमात्मा हमें इस ईश्वरीय देन को भरपूर मात्रा में दे । (अथर्ववेद 12 : 1: 19)

मृदा संरक्षण के उपाय

मृदा संरक्षण हेतु निम्नलिखित विधियों का प्रयोग करते हैं -

1.खेत को समतल एवं मेंड़बन्दी करना।

2.ढाल के विपरीत खेती करना ।

3.पट्टियों में खेती करना ।

4.समोच्चय (कन्टूर) विधि से खेती करना ।

5.रोक बाँध (चेक डैम) बनाना

6.सीढ़ीदार (वेदिका) खेती करना

7.वायु रोधी पट्टियां बनाना ।

8.घास एवं वृक्षारोपण करना ।

1. खेत को समतल एवं मेंड़बन्दी करना - इसके अन्तर्गत खेत को समतल करके खेत के चारों तरफ ऊँची मेंड़बन्दी कर देते हैं जिससे पानी बहकर खेत के बाहर नहीं जाता है।

चित्र संख्या 2.2 मेड़बन्दी

गाँव की मिट्टी गाँव में, गाँव का पानी गाँव में ।

खेत की मिट्टी खेत में,खेत का पानी खेत में।।

2. ढाल के विपरीत खेती करना - मृदा संरक्षण हेतु कृषि कार्य जैसे-जुताई, बुवाई सदैव ढाल के विपरीत दिशा में करते हैं जिससे पानी रूक सके ।

3.पट्टियों में खेती करना - इस विधि में अधिक आच्छदित फसलों जैसे मूंग,उर्द,मूंगफली की एक पट्टी बोने के बाद दूसरी पट्टी में कम आच्छदित फसलें जैसे

मक्का, बाजरा, ज्वार आदि की बुवाई करते हैं ।

चित्र संख्या 2.3 पट्टीदार खेती

4. कन्टूर विधि से खेती करना - ढालू भूमियों में समोच्चय रेखा के समानान्तर फसल उगाते हैं जिससे वर्षा जल रूकता है तथा मिट्टी कटने से बच जाती है।

चित्र संख्या 2.4 कन्टूर खेती

5. रोक बाँध बनाना (चेक डैम) - खेत से बहते जल को रोकने हेतु झाड़ी,पत्थर या पक्की संरचना बना देते हैं, जिससे पानी को रोककर भू-क्षरण कम करते हैं।

चित्र संख्या- 2.5 रोक बाँध

6. सीढ़ीदार खेती- अधिक ढालू एवं पहाड़ों पर ढाल के विपरीत सीढ़ीनुमा संरचना बनाकर खेती करते हैं तथा मिट्टी कटाव को रोकते हैं ।

7. वायुरोधी पट्टियाँ बनाना - शुष्क एवं रेतीली मृदा में हवा द्वारा भूमि कटाव को रोकने हेतु खेत के किनारे वायु की विपरीत दिशा में कई पंक्तियों में वृक्षों का रोपण कर देते हैं जिससे वायु का मृदा एवं फसलों पर प्रभाव कम पड़ता है ।

8. घास एवं वृक्षारोपण करना - खेती के अयोग्य भूमि को भूमि कटाव से बचाने हेतु घास एवं वृक्ष का रोपण करते हैं जिससे पानी धीरे-धीरे बहता है तथा भू-क्षरण कम होता है ।

अभ्यास के प्रश्न

1.सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगायें-

i) भू-क्षरण निम्न शक्तियों (कारकों) द्वारा होता है ।

क)वर्षा ख)हवा

ग)बफ घ) उपरोक्त सभी

ii) भू-क्षरण से तात्पर्य है -

क)भूमि के कणों का अपने स्थान से हटना एवं दूसरे स्थान पर इकट्ठा होना

ख)पानी का बहना

ग)बर्फ का पिघलना

घ)खेत की जुताई करना

iii) वायु भू-क्षरण निम्न कारक द्वारा होता है -

क)जल द्वारा ख)बर्फ द्वारा

ग)वायु द्वारा घ)गुरूत्वाकर्षण बल द्वारा

iv) बीहड़ (रेवाइन) निम्न स्थानों पर पाया जाता है-

क)नदी एवं नालों के किनारे व आस पास

ख)खेती योग्य भूमि पर

ग)खेत के मैदान में

घ)गाँव में

v) मृदा संरक्षण का अर्थ है-

क)मृदा को क्षरण से बचाना

ख)मृदा का पानी के साथ खेत से बहना

ग)ढाल पर खेती करना

घ)मिट्टी खोदना

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

i)ढालू खेतों से भू-क्षरण................होता है । (अधिक / कम)

ii)सबसे अधिक भू-क्षरण................से होता है। (जल / बर्फ)

iii)त्वरित क्षरण................द्वारा होता है । (प्रकृति / मानव)

iv)भूस्खलन (लैण्डस्लाइड)................में होता है । (पहाड़ी / मैदानी क्षेत्र)

v)मृदा सतह की एक इंच ऊपरी परत बनाने में प्रकृति को................से................वर्ष लगते हैं। (300 से 100)

3. निम्नलिखित कथनों में सही पर सही (✓) और गलत पर गलत (X) का निशान लगाइये -

i)भू-क्षरण का अर्थ मिट्टी को खोदकर अन्यत्र ले जाना । (सही / गलत)

ii)भू-क्षरण से खेत की उपजाऊ मिट्टी बह जाती है ।(सही / गलत)

iii)वायु क्षरण अधिकतर शुष्क एवं रेतीलो क्षेत्रों में होता है ।(सही / गलत)

iv)एक हेक्टेयर खेत से औसतन 50 टन मिट्टी प्रतिवर्ष बह जाती है। (सही / गलत)

4. निम्नलिखित में स्तम्भ `क' का स्तम्भ `ख' से सुमेल कीजिए ।

स्तम्भ `क'	**स्तम्भ `ख'**
जलीय क्षरण	वायु द्वारा मिट्टी के कणों का उड़ना
वायु क्षरण	जल द्वारा मिट्टी के कणों का बहना
त्वरित क्षरण	प्रकृति द्वारा क्षरण
प्राकृतिक क्षरण	मनुष्य के हस्तक्षेप द्वारा क्षरण

5. i)खेत से पानी बहने के बाद खेत में अंगुलियों जैसी संरचना कैसे बनती है ?

ii)वर्षा के बूँद का क्षरण कैसे होता है ?

iii)बालू के टीले (सैंडड्यून) कैसे बनते हैं ?

iv)पानी के साथ मिट्टी बहकर कहाँ चली जाती है? इसका प्रभाव क्या होता है ?

v)ढालू खेतों में फसलों का उत्पादन कम क्यों होता है ?

vi)बरसात के दिनों में मटमैले एवं गंदले पानी के अन्दर क्या होता है ?

vii) पुराने पेड़ों की जड़ें मिट्टी के ऊपर दिखाई देती हैं इसका कारण बताइये ?

viii)खेत को समतल एवं मेंड़बन्दी करने से क्या लाभ है ?

ix)ढालू भूमि में किस विधि से खेती करते हैं ?

x)पहाड़ी पर किस प्रकार की खेती करते हैं?

xi)वनस्पतियाँ (पेड़,पौधे) किस तरह से मृदा संरक्षण में सहायक होती हैं ?

xii)ढालू, भूमि में ढाल के विपरीत खेती करने से क्या लाभ है ?

xiii)सीढ़ीदार खेती से क्या समझते हैं ?

xiv)पशुओं द्वारा आनियमित चराई करने से मृदा संरक्षण पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

xv)खेत व नालों से बहते हुए पानी को रोकने हेतु कौन सी संरचना बनाते हैं ?

6.भू-क्षरण की परिभाषा दीजिए । जलीय भू-क्षरण के प्रकारों का वर्णन कीजिए ।

7.वायुक्षरण से आप क्या समझते हैं ? इसका वर्णन कीजिए ।

8.प्राकृतिक एवं त्वरित भू-क्षरण उदाहरण सहित समझाइये ।

9.भू-क्षरण किन-किन कारकों द्वारा होता है? वर्णन कीजिए ।

10.भू-क्षरण से होने वाली हानियों का वर्णन कीजिए ।

11.मृदा संरक्षण की परिभाषा एवं महत्व का वर्णन कीजिए ।

12.मृदा संरक्षण के उपायों का वर्णन कीजिए ।

back

इकाई - 3 भू-परिष्करण

- शून्य भू परिष्करण -लाभ हानि
- भू-परिष्करण का मिट्टी पर प्रभाव
- पाटा लगाने से लाभ
- मिट्टी चढ़ाने से लाभ
- जुताई के प्रकार
- भू-परिष्करण के यंत्र

शून्य भू परिष्करण

किसी फसल की बुआई, पूर्व फसल के ,अवशेषो में ही बिना जुताई किये, सीधे रूप से करना शून्य भू-परिष्करण कहलाता है। जहाँ पर खरपतवार नियन्त्रण रासायनिक विधि से करते है, वहाँ पर यह विधि उपयुक्त है।

लाभ

1. खेती की लागत मे कमी

2. मृदा क्षरण का कम होना

3. मृदा संरचना को यथावत बनाये रखना।

4. श्रम एवं धन की बचत

हानि

1. मृदा में सख्त सतह का बनना।

2. पूर्व फसल के ,अवशेषों पर लगे हुए कीट एवं रोग का प्रभाव ,अगली फसल पर होना।

3. शाकनाशी रसायन का ,अधिक प्रयोग होना।

भू-परिष्करण का मिट्टी पर प्रभाव

हम जान चुके हैं कि खेतों में कृषि यंत्रों द्वारा जुताई, गुड़ाई निराई आदि क्रियायें करना भूपरिष्करण कहलाती हैं।भू-परिष्करण मृदा पर अनेक प्रकार से प्रभाव डालती है जो निम्नलिखित हैं-

*मिट्टी भुरभुरी, मुलायम एवं पोली हो जाती है ।

*भूमि में पाये जाने वाले हानिकारक कीड़े मकोड़े एवं उनके अण्डे, बच्चे नष्ट हो जाते हैं ।

*भूमि की भौतिक एवं रासायनिक दशाआें में सुधार हो जाता है ।

*जल द्वारा भूमि का कटाव कम होता है या रूक जाता है ।

*भूमि में जल धारण क्षमता बढ़ जाती है ।

*भूमि में जल एवं वायु संचार अच्छा होता है ।

*भूमि में कार्बनिक पदार्थ मिल जाते हैं तथा उसकी मात्रा में वृद्धि होती है ।

*भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है ।

*भूमि में उपस्थित लाभदायक जीवों एवं जीवाणुओं की वृद्धि हो जाती है एवं उनकी क्रियाशीलता बढ़ जाती है ।

पाटा लगाने से लाभ

पाटा पटरी की तरह होता है । सामान्यत: यह लगभग 2 मीटर लम्बा, 30-50 सेमी चौड़ा एवं 3-6 सेमी मोटा होता है। यह लोहे का लम्बा बेलनाकार भी होता है। इसका उपयोग जुताई के बाद किया जाता है ।

पाटा लगाने से अनेक लाभ होते हैं -

*बड़े-बड़े ढेले टूट-फूट कर महीन कण बन जाते हैं ।

*खेत समतल हो जाता है जिससे बुवाई करने में आसानी होती है ।

*मृदा की ऊपरी सतह पर एक पतली पपड़ी या पर्त (Tilth)बन जाती है जिससे मृदा की नमी सुरक्षित रहती है।

*कृषि कार्यो जैसे मेंड़ बनाना, सिंचाई आदि में सुविधा होती है ।

*पाटा लगाने से खरपतवार एक जगह एकत्रित हो जाते है जिन्हें खेत से बाहर करके नष्ट कर दिया जाता है ।

*बीजों का अंकुरण अच्छा होता है ।

*अधिक वर्षा होने पर खेत में सभी जगह बराबर मात्रा में पानी अवशोषित होता है या आसानी से बाहर निकल जाता है।

मिट्टी चढ़ाने से लाभ

आलू, शकरकन्द, अरवी, बण्डा आदि फसलों में जड़ के ऊपर मिट्टी चढ़ाये जाने का अवलोकन कीजिए। आखिर किसान कुछ ही फसलों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाता है, क्यों ? यहाँ हमलोग मिट्टी चढ़ाने से होने वाले लाभ के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे जिससे स्पष्ट हो जायेगा कि फसलों पर मिट्टी क्यों चढ़ाई जाती है?

1.कन्द वाली फसलों जैसे आलू, बण्डा, शकरकंद आदि की जड़ों के चारों ओर मिट्टी चढ़ाने से उनकी जड़ों का विकास अच्छा होता है।

2.कन्द बड़े एंव अधिक संख्या में बनते हैं जिससे पैदावार अधिक होती है ।

3.यदि कन्द वाली फसलों पर मिट्टी न चढ़ाई जाय तो कंद हरे होते हैं जो खाये नहीं जाते हैं ।

4.सिंचाई करने में सुविधा होती है । जल सीधे पौधों की जड़ों के पास पहुँच जाता है ।मिट्टी बैठती नहीं है जिससे पौधों एवं जड़ों का विकास अच्छा होता है ।

5.सिंचाई में जल कम मात्रा में लगता है जिससे आर्थिक नुकसान नहीं होता है ।

6.गन्ना एवं इस प्रकार की अन्य फसलों में मिट्टी चढ़ाने से वे अधिक वर्षा एवं तेज हवा के प्रभाव से गिरने से बच जाती है।

जिससे उत्पादन अच्छा होता है एवं उनके गुणों में गिरावट नहीं आती है ।

जुताई (Ploughing) के प्रकार

परिस्थितियों के अनुसार जुताई का वर्गीकरण -

1.बाहर से अंदर की ओर जुताई- इस प्रकार की जुताई भारत में प्राचीन काल से प्रचलित है। इसमें जुताई खेत के एक कोने से प्रारम्भ करके धीरे-धीरे अंदर की ओर ले जाते हैं और अन्त में खेत के मध्य (बीचो-बीच) समाप्त करते हैं ।

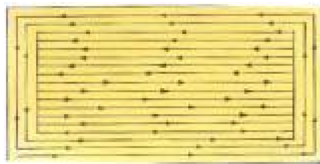

चित्र संख्या 3.1 बाहर से अन्दर की ओर जुताई

2.अंदर से बाहर की ओर जुताई- लगातार बाहर से अंदर की ओर जुताई करने से खेत बीच में नीचा हो जाता है अत: कभी कभी खेत की जुताई अन्दर से बाहर की ओर करनी चाहिए । इसमें जुताई खेत के बीचो-बीच से प्रारम्भ करके धीरे धीरे बाहर की ओर लाकर समाप्त करते हैं।

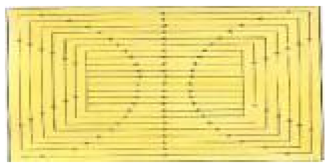

चित्र संख्या 3.2 अन्दर से बाहर की जुताई

3.पट्टियों में जुताई - जुताई की इस विधि में भूमि को अलग-अलग पट्टियों या आइसोलेटेड बैण्ड में जोता जाता है । इस प्रकार की जुताई पहाड़ों पर की जाती है ।

गहराई के अनुसार जुताई का वर्गीकरण

(i)उथली जुताई (Shallow Ploughing)- भूमि की 10-20 सेमी गहराई तक जुताई करने को उथली जुताई कहते हैं। प्राय: जुताई उथली ही की जाती है ।

(ii)गहरी जुताई (Deep Ploughing)- भूमि में 20 सेमी या इससे अधिक गहराई तक जुताई करने को गहरी जुताई कहते हैं। इसका उद्देश्य नमी सुरक्षित रखना एवं भूमि की निचली सतहों से कठोर परत को तोड़ना होता है ।

भू-परिष्करण के यंत्र

किसान जो भी कृषि कार्य या भू-परिष्करण करता है वह किसी न किसी यंत्र की सहायता से करता है।यहाँ हमलोग भू-परिष्करण यंत्रों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

मिट्टी पलट हल (मोल्ड बोर्ड प्लाउ)- यह एक प्रारम्भिक भू-परिष्करण यंत्र है। मिट्टी पलट हल से पहले मिट्टी कटती है फिर पलट जाती है जिससे नीचे की मिट्टी ऊपर और ऊपर की मिट्टी नीचे हो जाती है । मिट्टी पलटने वाले हलों में सबसे अधिक प्रचलित **मेंस्टन हल** है । हमारे प्रदेश में दोमट भूमि में काम करने के लिए इससे अधिक उपयोगी अन्य कोई हल नहीं है । मेंस्टन हल से बनी कूँड़ की चौड़ाई 15 सेमी होती है ।

मिट्टी पलट हल दो प्रकार के होते हैं -

i.एक हत्थे वाले

चित्र संख्या 3.4 एक हत्थे वाला मिट्टी पलट हल

ii।दो हत्थे वाले

कल्टीवेटर- इसका प्रयोग **प्रारम्भिक** एवं **द्वितीयक भू-पष्किरण** दोनों के लिए किया जाता है। इस यंत्र द्वारा खेती की जुताई एवं खड़ी फसल में खेत की निराई,गुड़ाई की जाती है । जिससे खरपतवार नष्ट हो जाते हैं और मिट्टी भुरभुरी एवं मुलायम हो जाती है । कल्टीवेटर मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं-

i.पशुचलित

ii. ट्रैक्टर (शक्ति) चलित

हमारे प्रदेश में पशुचलित **कानपुर कल्टीवेटर** बहुत अधिक प्रचलित है।

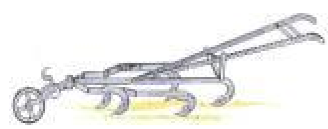

चित्र संख्या-3.5 कल्टीवेटर

हैरो (Harrow)- कल्टीवेटर के समान हैरो भी द्वितीयक भू-परिष्करण के लिए उपयोगी यन्त्र है। हैरो खेत से खरपतवार निकालकर मिट्टी को भुरभुरी बनाते हैं। मिट्टी के ऊपर बनी पपड़ी को तोड़ने एवं बिखेरी गयी खाद को मिलाने के लिए यह बहुत उपयोगी यंत्र है।

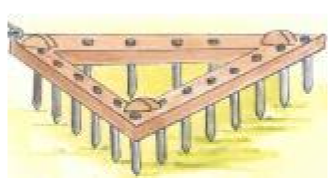

चित्र संख्या-3.6 हैरो

हो (Hoe) - `**हो'** का प्रयोग केवल निराई-गुड़ाई के लिए किया जाता है। लेकिन किसानों के लिए `**हो'** अधिक सुविधाजनक यंत्र है इसके दो प्रमुख कारण हैं।

i. अकोला `**हो'** को छोड़कर, जिसे बैल खीचते हैं, यह यंत्र प्राय: हाथ से चलाए जाते हैं। इसका प्रमुख उदाहरण **सिंह हैण्ड हो** है।

चित्र संख्या-3.7 सिंह हैन्ड हो

ii. यह बहुत कम मूल्य में उपलब्ध होते हैं और इनके प्रयोग में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती है।

फावड़ा- गुड़ाई तथा खुदाई करने, नाली बनाने आदि के लिए यह एक मुख्य यंत्र है। इसका फलक 15-20सेमी तक चौड़ा लोहे का होता है। इसमें लकड़ी का हत्था लगा होता है।

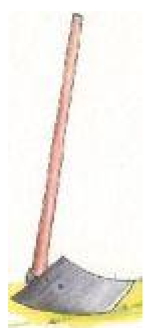

चित्र संख्या- 3.8 फावड़ा

खुर्पी-यह निराई-गुड़ाई करने,घास निकालने, नर्सरी से पौधों को खोदने तथा लगाने के काम में आती है। इसका फलक 5-10सेमी चौड़ा होता है। छोटी तथा हल्की होने के कारण इससे आसानी से कार्य किया जाता है।

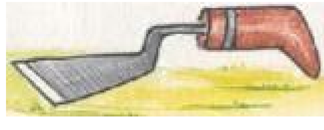

चित्र संख्या- 3.9 खुर्पी

कुदाली- गुड़ाई तथा खुदाई करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। झाड़ीदार पौधों के नीचे गुड़ाई करने में इससे आसानी होती है। इसके फलक की लम्बाई 10-15सेमी।तथा

अगले हिस्से की चौड़ाई 2-4 सेमी। तक होती है। इसमें भी लकड़ी का हत्था लगा होता है।

चित्र संख्या- 3.10 कुदाली

भूमि को समतल करने के यन्त्र (Soil levelling implements)- भूमि को समतल करने के लिए तीन प्रकार के यन्त्र प्रयोग में लाये जाते हैं-

4(i) पटेला या पाटा (ii)बेलन (रोलर) (iii)हेंगा या स्कैपर्स

बीज की बुवाई (Seed Sowing)-

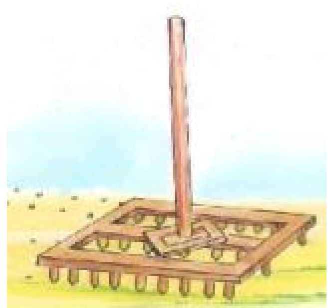

चित्र संख्या-3.11 डिबलर

बीज बोने की निम्नलिखित विधियाँ हैं -

i.छिटकवाँ(ब्राडकस्टिंग)

ii.देशी हल द्वारा कूँडों में

iii.देशी हल में नाई-चोगा बाँधकर

iv.डिबलर द्वारा

v.सीडड्रिल द्वारा

vi.कल्टीवेटर द्वारा

देशी हल - देशी हल सच्चे अर्थ में हल नहीं है क्योंकि यह मिट्टी नहीं पलटता है। लेकिन आदि काल से हम इस यन्त्र को हल के नाम से कहते आये हैं। पिछले हजारों वर्षों से **देशी हल हमारे देश का प्रमुख कृषि यन्त्र रहा है और आज भी भारतीय कृषक के जीवन में इस यंत्र का एक** महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

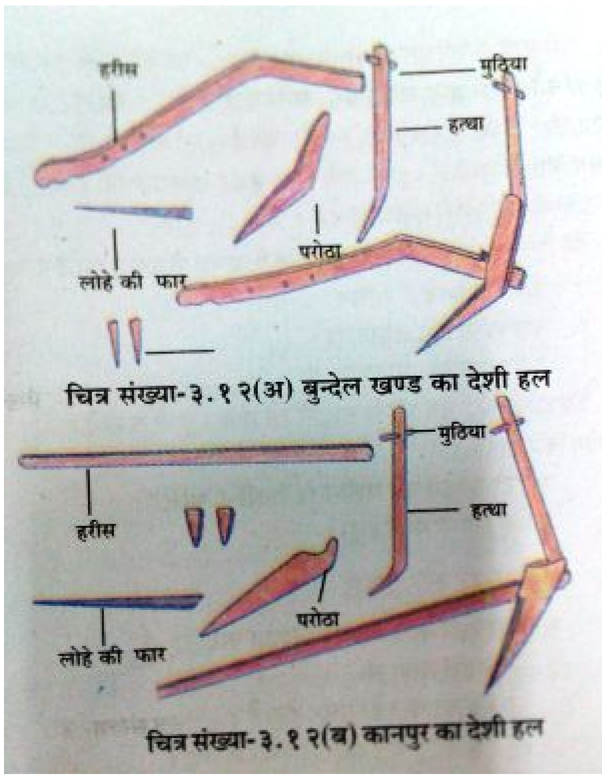

चित्र संख्या-३.१२(अ) बुन्देल खण्ड का देशी हल

चित्र संख्या-३.१२(ब) कानपुर का देशी हल

देशी हल बहुउद्देशीय यंत्र है । भूमि की जुताई के अतिरिक्त इस हल को खाद मिलाने, बीज बोने, खड़ी फसल में खरपतवार नष्ट करने और फसलों की गुड़ाई करने आदि अनेक भू-परिष्करण सम्बन्धी कार्यो के लिए प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार के देशी हलों के चित्र अंकित है।

अन्य कृषि यन्त्र

1.स्प्रेयर(Sprayer)-फसलों को हानिकारक कीटों एवं रोगों से बचाने के लिए विभिन्न प्रकार के कीटनाशी,रोगनाशी एवं खरपतवारनाशी रसायन छिड़के जाते हैं। इन रसायनों को छिड़कने के लिए कई प्रकार के यंत्र उपयोग में लाये जाते हैं जो इन रसायनों को छोटी बूँदों के रूप में छिड़कते हैं **स्प्रेयर** कहलाते हैं ।

2.डस्टर (Duster)- फसलों को हानिकारक कीटों एवं रोगों से बचाने के लिए जिन यंत्रों द्वारा कीटनाशी एवं रोग नाशी रसायनों का धूल के रूप में छिड़काव किया जाता है उन्हें डस्टर कहते हैं। **डस्टर** दो प्रकार के होते हैं ।

i. हस्त चलित । ii. शक्ति चलित ।

3. फसलों की मड़ाई (Thrasing) - मंड़ाई करने की निम्नलिखित विधियाँ हैं -

i.हाँथ से पीटकर

ii.पशुआें की सहायता से मड़ाई करना

iii.आलपैड थ्रेसर से

iv. धान की जापानी मड़ाई मशीन से

v.शक्ति चलित गहाई मशीन से

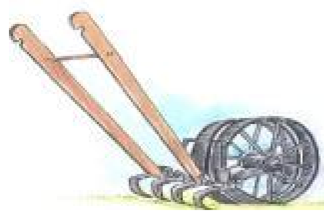

चित्र संख्या-3.12(स) पहिये वाली हैण्ड हो

4.ओसाई का पंखा (Vinowing fan)- यह अपेक्षाकृत बड़े आकार का पंखा है और अधिक हवा देता है यह दो प्रकार का होता है ।

(i) हाथ से चलाये जाने वाला ।(ii)पैर से चलाये जाने वाला ।

5. सीड ड्रेसर (Seed dressr)- बुवाई से पूर्व बीज को रोग रहित बनाने के लिए प्राय: उसमें कीटनाशी एवं फफूंदनाशी दवायें मिलायी जाती हैं । इसके लिये **सीड ड्रेसर** बहुत उपयोगी होता है। इसमें लोहे के फ्रेंम पर एक ड्रम लगा होता है जिसको हैण्डिल की सहायता से घुमाया जाता है ।

6.फसल कटाई यन्त्र- शक्ति प्रयोग के आधार पर फसल कटाई यन्त्र तीन प्रकार के होते हैं-

i.मानव शक्ति द्वारा चलित

ii.पशु शक्ति द्वारा चलित यंत्र

iii.यन्त्रिक शक्ति द्वारा चलित यंत्र

7.सिंचाई के लिए पानी उठाने के यंत्र -पृथ्वी के नीचे से या सतह पर से पानी उठाने के लिए अनेक प्रकार के यंत्र उपयोग किये जाते हैं ।

8.कुट्टी काटने की मशीन (Chaff-Cutter)

9.कोल्हू (गन्ना पेराई हेतु)

अभ्यास के प्रश्न

1.सही पर सही का (✓) का निशान लगाइए -

i.भू-परिष्करण से-

क)केवल जल का संचार होता है ।

ख)केवल वायु का संचार होता है ।

ग)जल एवं वायु दोनों का संचार होता है ।

घ)उपर्युक्त में से कोई नहीं ।

ii.पाटा लगाने से -

क)केवल बड़े बड़े ढेले टूटते हैं ।

ख)केवल छोटे -छोटे ढेले टूटते हैं ।

ग)बड़े एवं छोटे दोनों प्रकार के ढेले टूटते हैं ।

घ)ढेले टूटते नहीं हैं ।

iii.पतली पपड़ी या टिल्थ से-

क)मृदा की नमी नष्ट हो जाती है ।

ख)मृदा की नमी बढ़ा जाती है ।

ग)मृदा की नमी सुरक्षित रहती है ।

घ)उपर्युक्त में से कोई नहीं ।

iv.मिट्टी चढ़ाने से-

क)कन्द वाली फसलों को नुकसान होता है ।

ख)कन्द वाली फसलों को लाभ होता है ।

ग)कन्द वाली फसलों को लाभ एवं नुकसान होता है ।

घ)उपर्युक्त में से कोई नहीं ।

v.बाहर से अंदर की जुताई-

क)सीधे-सीधे करते हैं ।

ख)तिरछे तिरछे करते हैं ।

ग)गोल आकार में करते हैं।

घ)बाहर से अन्दर की ओर करते हैं।

vi.देशी हल से-

क)मिट्टी की खुदाई होती है।

ख)मिट्टी की पलटाई होती है ।

ग)मिट्टी की जुताई होती है ।

घ)मिट्टी की सिंचाई होती है ।

2.रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

i)भू-परिष्करण से भूमि की उर्वरा शक्ति........................जाती है ।(घट, बढ़ा)

ii)पाटा लगाने से कृषि कार्यो में........................होती है (असुविधा, सुविधा)

iii)मिट्टी चढ़ाने से कन्द........................बनते है । (बड़े, छोटे)

iv)पट्टियों में जुताई........................भागों में की जाती है।(मैदानी, पहाड़ी)

v)उथली जुताई में भूमि का........................सेमी. की गहराई तक जुताई करते हैं (10-20,40-80)

vi)कुदाल से खेत की........................होती है । (जुताई, गुड़ाई)

3. निम्नलिखित कथनों में सही पर सही (✓)तथा गलत पर गलत (X)का निशान लगाइये -

क)भू-परिष्करण द्वारा भूमि की भौतिक एवं रासायनिक दशाओं में सुधार होता है । (सही / गलत)

ख)पाटा लगाने से खेत ऊबड़ - खाबड़ हो जाता है ।(सही /गलत)

ग)मृदा के ऊपरी सतह पर बनी पपड़ी मृदा नमी को नष्ट कर देती है ।(सही /गलत)

घ)पाटा लगाने से बीजों का अंकुरण अच्छा होता है ।(सही /गलत)

ङ)मिट्टी चढ़ाने से गन्ना की फसल अधिक वर्षा एवं तेज हवा से गिर जाती है ।(सही /गलत)

च)अंदर से बाहर की ओर जुताई में खेत के एक कोने से प्रारम्भ करके धीरे -धीरे अंदर की ओर ले जाते हैं। (सही /गलत)

छ)गहरी जुताई को उथली जुताई भी कहते हैं।(सही /गलत)

ज)देशी हल आधुनिक हल है ।(सही /गलत)

4। निम्नलिखित में स्तम्भ `क' को स्तम्भ `ख' से मिलाइये -

स्तम्भ `क'	**स्तम्भ `ख'**
देशी हल	मिट्टी चढ़ाना
मेस्टन हल	सिंचाई
कन्द वाली फसल	बीज बोने का यंत्र
डिबलर	मिट्टी पलटना
रहट	जुताई

5.भूमि का कटाव किस क्रिया द्वारा कम हो जाता है ?

6.कन्द वाली फसलों के नाम लिखिए ।

7.कौन सी फसल मिट्टी न चढ़ाने से तेज हवा से गिर जाती है ?

8.अंदर से बाहर की ओर जुताई विधि का सचित्र वर्णन कीजिए ।

9.गहरी जुताई क्यों की जाती है ? यदि गहरी जुताई न की जाय तो क्या नुकसान होगा ?

10.देशी हल बनाकर उसके भागों के नाम लिखिए ।

11.डिबलर का चित्र बनाइए ।

12.शून्य भू-परिष्करण का क्या व्यर्थ है ? इसके लाभ एवं हानियाँ बताइये।

प्रोजेक्ट कार्य

1. बच्चों को कृषि महविद्यालय या कृषि विश्वविद्यालय के कृषि यंत्रों का अवलोकन ।

2. विद्यालय के पास कृषकों द्वारा प्रयोग किये जाने वाले यन्त्रों का अवलोकन एवं चित्र बनाकर अध्ययन ।

back

इकाई - 4 उर्वरकों के प्रकार एवं मृदा परीक्षण

HTQERU

- नत्रजनीय उर्वरक
- फॅास्फेटिक उर्वरक
- पोटैशिक उर्वरक
- यौगिक एवं मिश्रित उर्वरक
- जैव उर्वरक, इसके प्रकार, प्रयोग विधि एवं लाभ
- मृदा परीक्षण की आवश्यकता
- मृदा परीक्षण हेतु मिट्टी एकत्र करना
- मृदा परीक्षण करायें ।

कार्बनिक या अकार्बनिक पदार्थ जिससे पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्त्वों की पूर्ति की जाती है खाद या उर्वरक कहलाते हैं। खाद कार्बनिक पदार्थ होते हैं जबकि उर्वरक प्राय: अकार्बनिक पदार्थ होते हैं । खाद में पौधों के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व पाये जाते हैं जबकि उर्वरकों में एक-दो या कभी-कभी तीन तत्त्व पाये जाते हैं । उर्वरक कृत्रिम ढंग से फैक्टरी में बनाये जाते हैं जिनमें पोषक तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा अधिक होती है तथा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बहुत कम या बिलकुल नहीं होती हैं।इसमें मुख्य तत्त्व हैं **नाइट्रोजन,.फॅास्फोरस** तथा **पोटैशियम**।

नत्रजनीय उर्वरक

वजन के आधार पर नाइट्रोजन 78 % वायुमण्डल में और 79 % मृदा वायु में पाया जाता है लेकिन उपर्युक्त नाइट्रोजन को पौधे सीधे नहीं ले पाते हैं। केवल दलहनी फसलें उपर्युक्त नाइट्रोजन को स्थिरीकरण द्वारा लेती हैं ।

वर्गीकरण - नाइट्रोजन के रासायनिक रूप के आधार पर नत्रजन उर्वरकों को निम्नलिखित वगा में बाँटते है -

1. नाइट्रेट उर्वरक -(क) सोडियम नाइट्रेट - 16% नाइट्रोजन (ख) कैल्सियम नाइट्रेट - 15% नाइट्रोजन

इन उर्वरकों में उपलब्ध नाइट्रोजन नाइट्रेट रूप में होती है । जिसे पौधे उसी रूप में ग्रहण करते हैं। इन उर्वरकों का प्रयोग खड़ी फसल में छिड़काव के रूप में करने से अधिक लाभ होता है ।

2. अमोनियम उर्वरक-(क) अमोनियम सल्फेट-20% नाइट्रोजन (ख) डाई अमोनियम फॉस्फेट-18% नाइट्रोजन

इस वर्ग के उर्वरकों में नाइट्रोजन अमोनियम रूप में मिलता है जो मृदा में नाइट्रीकरण द्वारा नाइट्रेट में परिवर्तित हो जाता है फिर पौधों को प्राप्त होता है अत: इस वर्ग के उर्वरकों को मिट्टी में मिलाना चाहिए ।

3. अमोनियम और नाइट्रेट उर्वरक - (क)अमोनियम नाइट्रेट - 33. 5%नाइट्रोजन, (ख)अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट - 26 %नाइट्रोजन

इस वर्ग के उर्वरकों में नाइट्रोजन, अमोनिया एवं नाइट्रेट दोनों रूपों में पायी जाती है नाइट्रेट से नाइट्रोजन पौधों को तुरन्त प्राप्त हो जाती है लेकिन अमोनियम से नाइट्रोजन धीरे-धीरे प्राप्त होती है । इन्हें भी बुवाई के समय खेत में मिलाना चाहिए ।

4. नाइट्रोजन घोल - (क) अमोनिया यूरिया घोल - 35% नाइट्रोजन

5. एमाइड उर्वरक - (क) यूरिया - 46%नाइट्रोजन

विशेष-इस वर्ग का सबसे महत्वपूर्ण उर्वरक यूरिया है जिसमें कार्बन पाया जाता है इसलिए इसे कार्बनिक उर्वरक कहते हैं । यूरिया जल में बहुत अधिक घुलनशील है।अत: इसको (2%)घोल के रूप में भी खड़ी फसल में छिड़काव करते हैं।

नाइट्रोजन का मृदा एवं पौधों में महत्व - यह पौधों की वृद्धि में सहायता करता है ।पौधों में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा बढ़ाता है । अनाजों के उत्पादन एवं प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि करता है । मृदा में नाइट्रोजन की कमी से पौधों की बढ़वार रूक जाती है । मृदा में अत्यधिक नाइट्रोजन होने पर पौधों की बढ़वार बहुत अधिक हो जाती है जिससे पौधे गिर जाते हैं, फलियों या बलियों में **दाने कम** बनते है और उत्पादन बहुत कम हो जाता है। नाइट्रोजन की कमी से पौधों की **पत्तियाँ पीली** हो जाती हैं। आलू छोटे एवं कम बनते हैं। फल छोटे-छोटे हो जाते हैं और पकने से पहले ही गिर जाते हैं ।

फॉस्फेटिक उर्वरक

फॅास्फोरस को `**कृषि की मास्टर कुन्जी'** कहा जाता है । यह प्रत्येक पेड़ पौधों एवं वनस्पतियों का अति आवश्यक तत्त्व या भाग है। नाइट्रोजन के बाद पौधों के जीवन में फॅास्फोरस का दूसरा स्थान है ।वे सभी अकार्बनिक पदार्थ, जो पौधों को फॅास्फोरस देने के लिए प्रयोग किये जाते हैं,फॅास्फेटिक उर्वरक कहलाते हैं।

वर्गीकरण - घुलनशीलता के आधार पर फॅास्फेटिक उर्वरकों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है।

1.जल में घुलनशील - जो उर्वरक जल में घुल जाते हैं उन्हें घुलनशील फॅास्फेटिक उर्वरक कहते हैं ।इस वर्ग के उर्वरक में उपस्थित फॅास्फोरस को पौधे शीघ्रता से ले लेते हैं । इन्हें अम्लीय एवं उदासीन मृदाओं में प्रयोग किया जाता है ।

क) सिंगल सुपर फॅास्फेट - 16% फॅास्फोरस

ख) मोनो अमोनियम फॅास्फेट - 48%फॅास्फोरस

2.साइट्रेट घुलनशील - जो उर्वरक साइट्रिक अम्ल (नींबू में पाया जाने वाला अम्ल) में घुलनशील एवं पानी में अघुलनशील होते हैं उन्हें साइट्रेट घुलनशील फॅास्फेटिक उर्वरक कहते हैं। इस वर्ग के उर्वरकों का प्रयोग अम्लीय मृदाओं में लाभकारी होता है ।

क) डाई कैल्सियम फास्फेट - 32 % फॅास्फोरस

ख) बेसिक स्लैग - 15- 25% फॅास्फोरस

3.अघुलनशील - जो उर्वरक पानी और साइट्रिक अम्ल दोनों में नहीं घुलते हैं उन्हें अघुलनशील फॅास्फेटिक उर्वरक कहा जाता है । इस वर्ग के उर्वरकों का उपयोग अधिक अम्लीय मृदाआें में ही किया जाता है ।

क) राक फॅास्फेट - 20-40 % फॅास्फोरस

ख) हड्डी का चूरा - 20-25% फॅास्फोरस

फॅास्फोरस का मृदा एवं पौधों में महत्त्व - फॅास्फोरस के कारण पौधों की वृद्धि अच्छी एवं शीघ्रता से होती है। फॅास्फोरस राइजोबियम बैक्टीरिया की वृद्धि करके फलीदार फसलों द्वारा वायुमण्डल से नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करने में सहायता करता है । दाने की गुणवत्ता को बढ़ाता है । नाइट्रोजन की विषाक्तता (Toxicity)को कम करता है। पौधों में चर्बी की मात्रा को बढ़ाता है । पौधों में फूल लगने एवं दाने बनने में सहायक होता है । फसलों में बीमरियाँ कम लगती हैं और वे जल्दी पक जाती है । फसलों को गिरने से बचाता

है । पौधों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाता है । फॉस्फोरस की कमी से पौधों की पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और उनकी बढ़वार रूक जाती है ।

पोटैशिक उर्वरक

वे उर्वरक जो पौधों को पोटाश देते हैं, पोटैशिक उर्वरक कहलाते हैं । पौधों के जीवन में पोटाश का तीसरा स्थान है। पोटाश के महत्त्व को मनुष्य सदियों से जानता है। भारत की मृदाआें में पोटाश की कमी नहीं के बराबर है।

पोटैशिक उर्वरकों का वर्गीकरण -पोटैशिक उर्वरकों को दो समूहों में रखा गया है ।

1. पोटैशिक उर्वरक जिनमें क्लोराइड लवण उपस्थित होते हैं - इस समूह का मुख्य उर्वरक म्यूरेट आँफ पोटाश या पोटैशियम क्लोराइड है जिसमें 60%पोटाश पाया जाता है ।सभी उर्वरकों से सस्ता होने के कारण किसानों द्वारा इसका सबसे अधिक उपयोग होता है ।इस उर्वरक का प्रयोग आलू , टमाटर, तम्बाकू एंव चुकन्दर में नहीं करना चाहिए क्योंकि क्लोरीन की अधिकता के कारण इन फसलों की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।

2. पोटैशिक उर्वरक जिनमें क्लोराइड लवण उपस्थित नहीं होते हैं - इस समूह का मुख्य उर्वरक पोटैशियम सल्फेट है जिसमें 48-52% पोटाश पाया जाता है ।इसे सल्फेट आफ पोटाश भी कहते हैं। पोटैशियम क्लोराइड की तुलना में यह महंगा उर्वरक है।आलू, टमाटर, तम्बाकू और चुकन्दर की फसलों में इसका उपयोग लाभकारी होता है ।

पोटाश का मृदा एवं पौधों में महत्त्व-

यह पौधों की वृद्धि एवं फलों की चमक को बढ़ाता है।फलों का स्वाद बढ़ा जाता है।पौधों में बीमरियों से लड़ने की क्षमता बढ़ा जाती है।प्रोटीन निर्माण में सहायता करता है ।यह तना एवं जड़ों को मजबूत बनाता है जिससे हवा या पानी के कुप्रभाव से फसलें गिरती नहीं हैं । नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की अधिकता को संतुलित रखता है ।पोटाश की कमी से फसलें देर से पकती हैं और दानों, फलों एवं बीजों का उत्पादन घट जाता है ।

यौगिक एवं मिश्रित उर्वरक

दो या दो से अधिक उर्वरकों के मिश्रण को जिसमें दो या दो से अधिक पोषक तत्त्व उपस्थित हों मिश्रित उर्वरक या उर्वरक मिश्रण कहते हैं। मिश्रित उर्वरक जिसमें केवल दो मुख्य पोषक तत्त्व उपस्थित हो **अपूर्ण मिश्रित उर्वरक** कहलाते हैं और जिसमें तीन मुख्य पोषक तत्त्व (नाइट्रोजन,फॉस्फोरस,पोटाश)उपस्थित हों,उसे **पूर्ण मिश्रित उर्वरक** कहते हैं ।

आज कल विभिन्न फसलों के लिए विशेष उर्वरक मिश्रण बनाये जाते हैं। उर्वरक मिश्रण में नाइट्रोजन,फॉस्फोरस और पोटैशियम के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्त्व भी मिलाये जाते हैं ।

मिश्रित उर्वरक **तीन मानक** (ग्रेड) के होते हैं-

1. कम मानक - इनमें नाइट्रोजन,फॅास्फोरस एवं पोटैशियम की कम प्रतिशत मात्रा पाई जाती है। जब नाइट्रोजन,फॅास्फोरस और पोटाश के प्रतिशत मात्रा का योग 14 से कम होता है तब उसे कम मानक मिश्रित उर्वरक कहते हैं,जैसे - 2-8-2,2-4-6, ग्रेड ।

2. मध्यम मानक - इनमें नाइट्रोजन, फॅास्फोरस एवं पोटैशियम की मध्यम प्रतिशत मात्रा पायी जाती है ।जब तीनों तत्त्वों की प्रतिशत मात्राओं का योग 15-25 तक होता है तब उसे मध्यम मानक मिश्रित उर्वरक कहते हैं, जैसे- 5-8-7, 6-4-8 ।

3. उच्च मानक - इनमें नाइट्रोजन,फॅास्फोरस एवं पोटैशियम की अधिक प्रतिशत मात्रा पायी जाती है । जब तीनो तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा का योग 25 से अधिक होता है तब उसे उच्च मानक मिश्रित उर्वरक कहते हैं। जैसे - 19-19-19,22-22-11 ।

मिश्रित उर्वरक के लाभ

1.मिश्रित उर्वरक सस्ता होता है ।

2.मिश्रित उर्वरक मिट्टी और फसल की आवश्यकता के अनुसार बनाये जाते हैं जिससे पैदावार बढ़ जाती है ।

3.किसान बिना किसी परेशानी के मिश्रित उर्वरक प्रयोग कर सकता है ।

4.इसको सुगमता पूर्वक रखा जा सकता है ।

मिश्रित उर्वरकों से हानियाँ

1.जब मृदा में केवल एक या दो तत्त्वों की कमी हो, तब मिश्रित उर्वरक का प्रयोग लाभकारी नहीं होता है ।

2.मिश्रित उर्वरक में एक तत्त्व की अधिकता होती है जबकि दूसरे तत्त्व की कमी होती है ।

जटिल उर्वरक

आज कल ऐसे उर्वरकों का उत्पादन अधिक हो रहा है जिसमें पौधों के लिए आवश्यक दो या सभी मुख्य पोषक तत्त्व उपस्थित होते हैं ।इस प्रकार के उर्वरकों को **जटिल उर्वरक** कहते हैं । जब इन उर्वरकों में केवल दो पोषक तत्त्व उपस्थित होते हैं तब उन्हें **अपूर्ण जटिल उर्वरक** और जब तीनों मुख्य **पोषक तत्त्व** उपस्थित होते हैं, तब उन्हें पूर्ण जटिल उर्वरक कहते हैं । ये उर्वरक उन उर्वरकों से बहुत अच्छे होते हैं जिनमें केवल एक

पोषक तत्त्व उपस्थित होता है, जैसे - अमोनियम सल्फेट या सुपर फॅास्फेट या म्यूरेट आफ पोटाश,क्योंकि इनमें नपे-तुले पोषक तत्त्व उपस्थित होते हैं ।

जटिल उर्वरकों के गुण

1.इनमें पोषक तत्त्वों की अधिक मात्रा पायी जाती है ।

2.जटिल उर्वरकों के रखने एवं ढोने की लागत कम होती है जिससे ये सस्ते होते हैं ।

3.लगभग 50-90% नाइट्रोजन और फॅास्फोरस पौधों को प्राप्त हो जाते हैं क्योंकि ये पानी में घुलनशील होते हैं ।

जटिल उर्वरक के प्रकार- जटिल उर्वरक तीन प्रकार के होते हैं-

1. अमोनियम फॅास्फेट -

क)मोनो अमोनियम फॅास्फेट

ख)डाई अमोनियम फॅास्फेट

ग)अमोनियम फॅास्फेट सल्फेट

2. नाइट्रो - फॅास्फेट - राक फॅास्फेट पर नाइट्रिक अम्ल की क्रिया से नाइट्रो - फास्फेट बनता है ।

3. एन. पी. के. जटिल उर्वरक - आजकल विभिन्न मानक के **एन. पी. के. जटिल उर्वरक** बनाये जाते हैं ।ये दानेदार होते हैं और इनकी दशा अच्छी होती है ।इनमें तीनों प्रमुख तत्त्व (नाइट्रोजन फॅास्फोरस एंव पोटाश) विभिन्न मात्रा में पाये जाते हैं जिसे **ग्रेड** कहते हैं ।जैसे - 12 : 32 : 16 इसका अर्थ यह है कि इस ग्रेड के उर्वरक में 12 प्रतिशत नाइट्रोजन, 32 प्रतिशत फॅास्फोरस एवं 16 प्रतिशत पोटाश उपलब्ध है।

जैव उर्वरक (Bio Fertilizer)

जैव उर्वरक **सूक्ष्म जीव कल्चर** होते हैं जो प्राय: मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने के लिये प्रयोग किये जाते हैं । कुछ सूक्ष्म जीव कल्चर पौधों के लिये फॅास्फोरस की प्राप्यता को बढ़ाने के लिये प्रयोग किये जाते हैं और कुछ कार्बनिक पदार्थ को शीघ्रता से सड़ाने के लिये प्रयोग किये जाते हैं ।जैव उर्वरक बहुत सस्ते होते हैं इनके प्रयोग में रू। 50/- से रू। 80/- प्रति हेक्टेयर खर्च आता है । इनका प्रयोग बहुत आसान होता है ।एक सामान्य किसान इसे आसानी से प्रयोग कर सकता है ।जैव उर्वरक का प्रयोग करके फसलों के लिए आवश्यक नाइट्रोजन एवं फॅास्फोरस की प्रयोग मात्रा को बहुत कम किया जा सकता है ।

जैव उर्वरक का वर्गीकरण- जैव उर्वरकों को मुख्य रूप से 3 वर्गो में विभाजित किया जाता है -

1.नाइट्रोजन स्थिर करने वाले जैव उर्वरक

2.फॅास्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जैव उर्वरक

3.कार्बनिक पदार्थ को सड़ाने वाले जैव उर्वरक

नाइट्रोजन स्थिर करने वाले जैव उर्वरक- दलहनी फसलों की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिर करने वाली गांठें पायी जाती हैं जिसमें सूक्ष्म जीव एवं वैक्टीरिया (जीवाणु) उपस्थित होते हैं जो वायुमण्डल की नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करते हैं ।जब सूक्ष्म जीवों का कल्चर (जैव उर्वरक) मृदा में मिला दिया जाता है तो सूक्ष्म जीवों द्वारा मृदा में स्थिर किये गये नाइट्रोजन में बहुत अधिक वृद्वि हो जाती है । प्रयोग किए जाने वाले कुछ जैव उर्वरक निम्नलिखित हैं -

1.राइजोबियम कल्चर

2.ऐजोटोवैक्टर कल्चर

3.नीली-हरी शैवाल कल्चर

4.फॅास्फोबैक्टरीन कल्चर

राइजोबियम कल्चर का उपयोग दलहनी फसलों में किया जाता है तथा ऐजोटोवैक्टर कल्चर धान, कपास, ज्वार, सरसों, सब्जी, गेहूँ, जौ आदि फसलों में प्रयोग किया जाता है । नीली हरी शैवाल कल्चर का उपयोग धान की फसल में किया जाता है।

जैव उर्वरक प्रयोग करने की विधि -हमारे प्रदेश में मृदा उर्वरता बढ़ाने के लिये मुख्य रूप से राइजोबियम कल्चर का प्रयोग किया जाता है । 100-200 ग्राम गुड़ को एक लीटर पानी में गर्म करके घोल बना लेते है । 200 ग्राम कल्चर गुड़ के घोल में अच्छी प्रकार मिलाते हैं । गुड़ और कल्चर के मिश्रण को एक हेक्टेयर में प्रयोग किये जाने वाल बीज के साथ अच्छी प्रकार मिलाते हैं और 30 मिनट के लिए छोड़ देते हैं। इस प्रकार शोधित बीज को छाये में सुखाकर खेत में बो देते हैं।

जैव उर्वरक प्रयोग करने के लाभ -

1. जैव उर्वरक से भूमि की उर्वरता बढ़ती है।

2.वायुमण्डल नाइट्रोजन के स्थिरीकरण में सहायक होता है।

3. भमि में स्थिर एवं ,अविलेय, फास्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों को उपलब्ध कराता है।

4. जैव पदार्थो को तीव्रता से सड़ाने में सहायक होता है।

5. भूमि की जल धारण क्षमता को बढ़ाता है।

6. फसलों की उपज बढ़ाने में सहायक होता है।

7. पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में सहायक होता है।

मृदा परीक्षण की आवश्यकता

मृदा का परीक्षण किया जाता है जिससे पता चलता है कि मृदा फसल उगाने के योग्य है या नहीं ; मृदा से अच्छी पैदावार मिल सकती है या नहीं ।मृदा परीक्षण उर्वरता निर्धारण के लिए एक अति महत्त्वपूर्ण रासायनिक विधि है ।यह विधि इस दृष्टि से अधिक उपयोगी है कि फसल बोने के पूर्व ही मृदा में पोषक तत्त्वों के स्तर का ज्ञान हो जाता है जिससे फसलों में संतुलित उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है।

मृदा परीक्षण के उद्देश्य-

1.मृदा में सुलभ पोषक तत्त्वों का सही -सही निर्धारण ।

2.विभिन्न फसलों की दृष्टि से तत्त्वों की कमी का आकलन ।

3.खराब मृदाओं जैसे ऊसर एवं अम्लीय मृदाआें में सुधारकों की मात्रा का निर्धारण ।

मृदा परीक्षण हेतु मिट्टी एकत्रित करना

एक खेत के बराबर हिस्से के 10-20 स्थानों से जुती हुई संस्तर (9-20 सेमी) से मिट्टी एकत्रित करते हैं। मिट्टी एकत्रित करने से पहले मृदा के ऊपर जमी घास-फूस को खुर्पी या फावड़े की सहायता से हटा देते हैं तत्पश्चात प्रत्येक स्थान से 1-2 किग्रा मिट्टी एकत्रित करते हैं। इस प्रकार का एक संयुक्त नमूना 2-4 हेक्टेयर खेत के लिए एकत्रित किया जाता है । ढालदार स्थानों से मृदा नमूना निचले, मध्य एवं ऊपरी भागों के लिए अलग-अलग एकत्रित करते हैं । **संयुक्त मृदा नमूने** को अच्छी प्रकार एक में मिलाकर उसके चार भाग कर लेते हैं जिसके तीन भाग को हटा देते हैं । इस क्रिया को लगभग आधा किग्रा मृदा रहने तक दुहराते हैं। इस मृदा नमूने को कपड़े के एक थैले में रख लेते हैं ।

सावधानियां -

1. निचली या ऊंची जगह, खाद के ढेर, फाटक के पास जहाँ जानवर (मरे हुए) गड़े हों, छायादार स्थान, कुँआ एवं नहर के समीप, खेत के किनारे या मकानों के निकटवर्ती स्थानों से नमूना एकत्रित नहीं करना चाहिए ।

2. नमूना एकत्रित करने के लिए साफ थैली का प्रयोग करना चाहिए ।

3. खड़ी फसल वाले खेत में मृदा नमूना दो लाइनों के बीच से लिया जाता है ।

मृदा परीक्षण करायें

हम लोग भली-भांति जानते है कि जब कोई बीमारी होती है तो डॉक्टर के पास जाते हैं। डॉक्टर हम लोगों की जाँचपड़ताल नाड़ी देखकर, आँख देखकर,आला लगाकर आदि करके पता लगाता है कि हमें कौन सा रोग है। यदि डॉक्टर के समझ में रोग नहीं आता है तो खून मल -मूत्र के परीक्षण के लिये रोग विज्ञान प्रयोगशाला के पास भेजता है जिससे सही रोग के कारण का सही पता चल सके । पुन: डॉक्टर रोगी का इलाज करता है और रोगी ठीक हो जाता है।

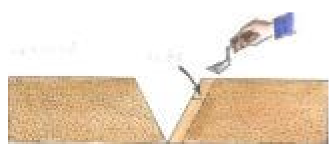

चित्र संख्या-4.1(अ) मृदा नमूना लेने की सही विधि

फसलों को बोने से पहले मिट्टी का परीक्षण करवाना अति आवश्यक होता है ।कौन सी फसल बोना है ? उसके लिए कितने पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होगी ? पोषक तत्वों को किन -किन साधनों से देना है ? आदि को ध्यान में रखकर मृदा का परीक्षण करवाना चाहिए और उसके बाद मृदा परीक्षण सूचना के अनुसार खेत में खाद, उर्वरक एवं कीटनाशक दवाओ का प्रयोग करने के बाद ही बीज बोना चाहिए ।

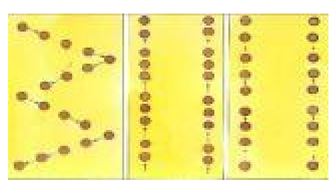

सही गलत सही

चित्र संख्या-4.1(ब)

विभिन्न स्थानों से प्राथमिक मृदा नमूना लेना

प्रोफेसर नीलरत्न धर

प्रोफेसर नीलरत्न धर

प्रोफेसर नीलरत्न धर का जन्म 2 जनवरी 1892 मे जसोर नामक कस्बे में हुआ था। यह कस्बा इस समय बांगला देश में है। इनके पिता प्रसन्न कुमार धर एक वकील थे।1897 ई0 में उन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ही कस्बे के जिला परिषद के स्कूल में प्रारम्भ की। उन्होंने हाई स्कूल से एम.एस.सी. तक सभी कक्षाएं अधिक अंकों के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।जुलाई 1913 में रिसर्च फेलों के रूप में इनकी नियुक्ति कलकत्ता विश्वविद्यालय में हो गई।

प्रोफेसर धर पहली बार 3 सितम्बर 1915 को यूरोप के दौरे पर भारत सरकार की छात्रवृत्ति पर गये।1915ई.के सितम्बर के अन्तिम सप्ताह में इन्होंने प्रोफेसर फिलिप्स के निर्देशन में डी.एस.सी. उपाधि के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया और 18 माह की अवधि में ही इन्होंने अपना शोध कार्य पूरा कर लिया। मई 1917 ई.को लन्दन विश्वविद्यालय द्वारा इन्हें डी.एस.सी.उपाधि प्रदान की गई।

जुलाई 1919 से प्रोफेसर धर म्योर कालेज में अध्यापन करने लगे। 1926 में यूरोप के लिए रवाना हुए तथा कई देशों का भ्रमण किया। फिर स्वदेश लौटकर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सेवा करने लगे। 1952 में इलाहाबाद के रसायन विभाग से अन्तिम रूप से सन्यास ले लिया।

प्रोफेसर धर को उनके ``फोटो केमिकल नाइट्रोन फिक्सेशन" तथा भूमि को उपजाऊ बनाने सम्बन्धी शोध कार्य पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हुई। इनके निर्देशन में लगभग 130 लोगों को डी.फिल. तथा 20 लोगों को डी.एस.सी. की उपाधियाँ प्राप्त हुई।

प्रोफेसर धर ने 600 मूल शोध पत्रों को लिखा जो विश्व के किसी एक वैज्ञानिक द्वारा सम्भव नहीं हो सका है। वह अपने जीवन के अन्तिम समय तक शीलाधर इन्स्टीटयूट के सम्मनित निदेशक थे। इनकी मृत्यु सन् 1986 में हुई।

अभ्यास के प्रश्न

1. सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगाइये -

i. वजन के आधार पर वायुमण्डल में प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता है ।

क)60 ख) 70

ग)78 घ) 90

ii.अमोनियम सल्फेट में प्रतिशत नाइट्रोजन की मात्रा पायी जाती है ।

क)15 ख) 20

ग)19 घ) 30

iii.सिंगल सुपर फॅास्फेट में प्रतिशत फॅास्फोरस की मात्रा पायी जाती है ।

क)12 ख) 16

ग)20 घ) 24

iv.म्यूरेट आँफ पोटाश में प्रतिशत पोटैशियम की मात्रा पायी जाती है ।

क)40 ख) 50

ग)60 घ) 70

v.जटिल उर्वरक प्रकार के होते हैं ।

क)दो ख) तीन

ग)चार घ) पांच

vi.जैव उर्वरक मृदा में बढ़ाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं ।

क)नाइट्रोजन ख) फॅास्फोरस

ग)पोटाश घ) सल्फर

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

i)मृदा वायु में वजन के आधार पर नाइट्रोजन की..................प्रतिशत मात्रा पायी जाती है I (69, 79)

ii)यूरिया में नाइट्रोजन की..................प्रतिशत मात्रा पायी जाती है । (36, 46)

iii)डाई कैल्सियम फॅास्फेट में फॅास्फोरस की..................प्रतिशत मात्रा पायी जाती है ।(22, 32)

iv)पोटैशियम सल्फेट में पोटाश की..................प्रतिशत मात्रा पायी जाती है । (38, 48)

v)मिश्रित उर्वरक..................होता है । (सस्ता, महँगा)

vi)राइजोबियम बैक्टीरिया मृदा में..................स्थिर करता है । (फॅास्फोरस, नाइट्रोजन)

vii)मृदा परीक्षण उर्वरता निर्धारण करने की एक..................विधि है ।(भौतिक, रासायनिक)

3.निम्नलिखित में स्तम्भ `क' को स्तम्भ `ख' से सुमेल कीजिए -

स्तम्भ`क'	**स्तम्भ`ख'**
i.कम्पोस्ट	अकार्बनिक उर्वरक
ii.डाई अमोनियम फॅास्फेट	दलहनी फसलें
iii.सूक्ष्म जीव कल्चर	उर्वरता निर्धारण
iv.मृदा परीक्षण	जैव उर्वरक
v.नाइट्रोजन स्थिर करने वाली गांठें	जटिल उर्वरक
vi.सिंगल सुपरफॅास्फेट	कार्बनिक खाद

4. निम्नलिखित कथनों में सही पर (✓)तथा गलत पर (X)का निशान लगाइये ।

i)यूरिया फॅास्फेटिक उर्वरक है ।

ii)नाइट्रोजन को कृषि की मास्टर कुन्जी कहा जाता है ।

iii)रॉक फॅास्फेट में 20-40% फॅास्फोरस पाया जाता है ।

iv)फॉस्फोरस वायुमण्डल से बैक्टीरिया द्वारा नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करने में सहायता करता हैं ।

v)पोटाश पौधों की जड़ों एवं तना को मजबूत बनाता है ।

vi)मृदा नमूना छायादार स्थानों से एकत्रित किया जाता है ।

5. खाद को परिभाषित कीजिए ।

6.नाइट्रोजन उर्वरक का वर्गीकरण कीजिए ।

7.मृदा में नाइट्रोजन की कमी का पौधों पर प्रभाव बताइये ।

8.फॉस्फेटिक उर्वरकों का वर्गीकरण कीजिए ।

9.पोटाश का पौधों पर क्या प्रभाव होता है ?

10.मृदा परीक्षण क्यों कराना चाहिए ?

11.जैव उर्वरक क्या है ?

12.नाइट्रोजन उर्वरकों का वर्गीकरण करके पौधों के लिए इनका महत्व लिखिए ।

13.फॉस्फेटिक उर्वरकों का वर्गीकरण कीजिए एंव फॉस्फोरस का पौधों पर प्रभाव का वर्णन कीजिए।

14.पोटैशिक उर्वरकों का वर्गीकरण करते हुए पोटाश के महत्व का वर्णन कीजिए ।

15.जैव उर्वरक का वर्गीकरण कीजिए तथा जैव उर्वरक के प्रयोग करने की विधि का वर्णन कीजिए।

16.मिश्रित उर्वरक से आप क्या समझते हैं ? मिश्रित उर्वरक के लाभ एवं हानियों को समझाइये ।

17.जैव उर्वरक के लाभ लिखिए

प्रोजेक्ट कार्य

नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश उर्वरकों के नमूने एकत्रित करवाकर उनकी भौतिक पहचान कराना ।

back

इकाई - 5 सामान्य फसले

- रबी - चना, मटर, आलू,
- जायद - लौकी, बैगन
- ज्वार, बाजरा
- ज्वार की उन्नत खेती

ज्वार की उन्नत खेती

चित्र संख्या- 5.1 ज्वार की फसल

ज्वार खरीफ की मुख्य फसलों में से एक है । इस फसल की खेती अनाज तथा चारे दोनों के लिए हमारे देश में बड़े पैमाने पर होती है । ज्वार का हरा चारा **चरी** के नाम से प्रसिद्ध है। यह अत्यन्त पौष्टिक होता है। करबी का प्रयोग सूखे चारे के रूप में किया जाता है। भारत में ज्वार की खेती लगभग सभी प्रदेशों में की जाती है परन्तु कम वर्षा वाले क्षेत्रों में ज्वार की खेती विस्तृत रूप से की जाती है । ज्वार के आटे से स्टार्च व एल्कोहल भी तैयार किया जाता है ।हमारे प्रदेश के झाँसी मण्डल में ज्वार की खेती सबसे अधिक होती है। कानपुर,मथुरा,हरदोई ,फतेहपुर, रायबरेली आदि जिलों में भी इसकी खेती की जाती है ।

मिट्टी- बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए उत्तम होती है । जल निकास की अच्छी व्यवस्था होने पर ज्वार की खेती अन्य भूमि पर भी की जा सकती है ।

खेत की तैयारी- एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के पश्चात दो जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करके अन्तिम जुताई के समय खेत में पाटा लगाकर भूमि तैयार की जाती है।

खाद तथा उर्वरक- उर्वरक की मात्रा मिट्टी की जाँच के अनुसार निर्धारित की जाती है। सामान्यत: चारे के लिए गोबर की खाद 150-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तथा दाने के लिए 100-150 कुन्तल प्रति हेक्टेयर वर्षा होने के पहले खेत में मिला देनी चाहिए। खाद के अभाव में उर्वरकों का प्रयोग निम्नलिखित प्रकार से करते हैं -

नाइट्रोजन - 100 किग्रा प्रति हेक्टेयर

फॉस्फोरस - 60 किग्रा प्रति हेक्टेयर

पोटाश - 40 किग्रा प्रति हेक्टेयर

नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई के समय व आधी मात्रा बुवाई के 40-50 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय ही दे देना चाहिए ।

प्रजातियाँ- ज्वार की अनेक देशी एवं उन्नतशील प्रजातियाँ प्रचलित हैं। झाँसी मण्डल में देवला प्रजति तथा कानपुर के आस-पास एक दनियाँ और दो दनियाँ प्रजातियाँ अधिक प्रचलित हैं । उत्तर प्रदेश में ज्वार की निम्नलिखित किस्में प्रचलित हैं-

उन्नतशील प्रजातियाँ	ज्वार की संकर प्रजातियाँ
8 बी ज्वार – यह दो दनियाँ ज्वार है।	सी एस एच 1,2,3
टाइप 3– यह एक दनियाँ ज्वार है।	स्वर्ण
मऊरानीपुर–1, यह एक दनियाँ ज्वार है।	सी एस वी –3
वर्षा – यह दो दनियाँ ज्वार है।	संकर ज्वार
एम पी ज्वार – चारे के लिए ।	टा 22 टा 8 वी

बुवाई का समय- उपर्युक्त किस्मों की बुवाई के लिए जुळाई का दूसरा सप्ताह उपयुक्त होता है। इससे पहले बुवाई करने से फसल के फूलने के समय, वर्षा के कारण अधिकांश पराग धुल जाता है और दाने अच्छे नहीं पड़ते। चारे की फसल की बुवाई पलेवा करके जून के आरम्भ में कर दी जाती है ।

बीज की मात्रा- दाने के लिए 12-15 किग्रा प्रति हेक्टेयर तथा चारे के लिए 40-50 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बीज को अच्छी तरह उपचरित कर लेना चाहिए ।

बोने की विधि- दाने के लिए बुवाई कतारों में की जाती है। कतार से कतार की दूरी 45 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 15-20 सेमी होनी चाहिए। बीज की गहराई 4-5 सेमी होनी चाहिए। चारे के लिए ज्वार छिटकवा विधि से बोया जाता है ।इसमें उर्द, मूगं, लोबिया आदि मिश्रित कर देने से चारा अधिक पौष्टिक हो जाता है ।

सिंचाई तथा जल निकास- वैसे तो यह खरीफ की फसल है। वर्षा होती रहती है लेकिन आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई भी करनी चाहिए। बलियाँ निकलते समय तथा दाना भरते समय खेत में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। वर्षा अधिक होने पर जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए ।

निराई गुड़ाई-दाने की फसल में बुवाई के तीन सप्ताह बाद एक निराई कर देनी चाहिए जिससे खरपतवार नष्ट हो जाय। रासायनिक विधि से खरपतवार नियन्त्रण के लिए एट्राजिन 1.5 किग्रा 600-800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 2-3 दिन के अन्दर छिड़क देना चाहिए ।

फसल सुरक्षा

कीट नियंत्रण- ज्वार की फसल को कीड़ों से बड़ी हानि होती है। अंकुरण के ठीक 4-5 दिन बाद एक लीटर मेटसिस्टाक्स 19 ई सी को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करने से प्ररोह मक्खी तथा तना बेधक कीट नष्ट हो जाते हैं अथवा 10% फोरेट ग्रेन्यूल 19 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय कूड़ों में मिला देना चाहिए अथवा मोनोक्रोटोफास 36 ई सी,1लीटर कीटनाशक को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए ।

रोग नियंत्रण- अनावृत कण्डुवा ज्वार के प्रमुख रोग हैं जिससे ज्वार के दाने काले चूर्ण में बदल जाते हैं।इसके नियन्त्रण के लिए कार्बेन्डजिम अथवा कार्बाक्सीन के 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित कर बोना चाहिए ।

कटाई-मड़ाई - दाने की फसल 110-115 दिन में पककर तैयार हो जाती है। दानों के पक जाने पर फसल काट लेनी चाहिएं। उसके बाद बलियों को सूखी फसल से काट कर अलग कर लेते है। मड़ाई सामान्यत: बैलों से ही की जाती है। आधुनिक समय में ज्वार की मड़ाई थ्रेसर से होने लगी है जिससे समय की बचत हो जाती है। चारे की फसल लगभग 2 माह बाद पशुओं को खिलाने के योग्य हो जाती है ।

उपज- उपर्युक्त विधि से पैदा की गयी फसल से लगभग 30- 40 कं। प्रति हेक्टेयर दाने की उपज होती है । सूखे चारे की उपज 100-110 कु प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाती है। ज्वार की बालियाँ जब अधपके दाने की होती हैं, तब उसे भून कर खाने में बड़ी स्वादिष्ट और लाभदायक होती हैं।

बाजरे की उन्नत खेती

चित्र संख्या-5.2 बाजरा की फसल

उत्तर प्रदेश में बाजरा प्राय: जाड़ों में भोजन के लिए उपयोग की जाने वाली खरीफ की मुख्य फसल है । कुछ स्थानों पर दानों को उबालकर भी खाया जाता है। बालियों को भूनकर दानों को खाते हैं। बाजरे की फसल का पशुआें के लिए हरे व सूखे चारा के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

हमारे देश में लगभग 1.12करोड़ हेक्टेयर भूमि पर बाजरे की खेती की जाती है जिससे लगभग 44 से 50 लाख मीट्रिक टन बाजरा उत्पन्न होता है ।

हमारे प्रदेश में लगभग 8.34 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर बाजरे की फसल उगायी जाती है। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले में बाजरे की सर्वाधिक खेती होती है । इसके अतिरिक्त आगरा, एटा, बदायूँ, इटावा, मथुरा, इलाहाबाद, मेरठ, मुरादाबाद आदि जिलों में भी बाजरे की खेती की जाती है ।

बाजरे की उन्नतशील प्रजातियाँ

बाजरे की उन्नतशील प्रजातियाँ

प्रजाति	पकने की अवधि	दाने की औसत उपज (कुन्तल प्रति हेक्टेयर)	सूखे चारे की उपज (कुन्तल प्रति हेक्टेयर)
संकुल प्रजातियाँ			
आई सी एम बी 144	80 –100 दिन	18 –24 कु	70 –75 कु
डब्लू सी सी 75	85 –90 दिन	18 –20 कु	70 –75 कु
आई सी टी पी 8203	70 –75 दिन	18 –23 कु	60 –65 कु
राज 171	70 –75 दिन	16 –22 कु	60 –65 कु
डी के 460	80 –90 दिन	30 –32 कु	70 –75 कु
संयुल प्रजातियाँ			
पूसा 322	75 –80 दिन	24 –25 कु	50 –55 कु
पूसा 23	75 –80 दिन	22 –23 कु	50 –55 कु
आई सी एम एच 451	85 –90 दिन	22 –23 कु	50 –60 कु

भूमि- बाजरे की खेती के लिए बलुई दोमट मिट्टी सबसे उत्तम होती है ।इसके लिए अच्छे जल निकास वाली भूमि का होना आवश्यक है ।

खेत की तैयारी- पहली जुताई मिट्टी पलट हल से एवं 2-3 बार देशी हल या कल्टीवेटर से करके खेत तैयार कर लेना चाहिए ।

उर्वरक- अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए देशी प्रजति हेतु भूमि में 40 किग्रा नाइट्रोजन, 30 किग्रा फॉस्फोरस तथा 30 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर बुवाई के समय कूँड़ में डाल देना चाहिए। संकर जतियों के लिए 80-100 किग्रा नाइट्रोजन, 40 किग्रा फॅास्फोरस तथा 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से दिया जाता है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॅास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले बेसल ड्रेसिंग और शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में,फसल जब 19-30 दिन की हो जाए तब देनी चाहिए।

बीज का उपचार- अरगट रोग से ग्रसित दानों को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोकर निकालना चाहिए । इसके बाद 2 ग्रा कार्बेन्डजिम से एक किग्रा बीज को उपचरित करके बोना चाहिए।

बीज दर एवं बुवाई- बाजरा की बुवाई हेतु 4 से 5 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज प्रयोग किया जाता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी रखनी चाहिए। बीज की बुवाई 3-4 सेमी गहरे कूँड़ में हल के पीछे करनी चाहिए। बाजरे की बुवाई समान्यत: जुलाई के मध्य से अगस्त के मध्य तक करनी चाहिए।

सिंचाई- हमारे प्रदेश में बाजरे की फसल प्राय: असिंचित दशा में होती है लेकिन सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर इसमें लगभग दो तीन बार सिंचाई कर देनी चाहिए ।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियन्त्रण- दाने के लिए बोई गयी फसल की कम से कम दो तीन बार निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। कानपुरी कल्टीवेटर चलाकर गुड़ाई की जा सकती है। खरपतवार नष्ट करने के लिए एट्राजिन की 1 किग्रा मात्रा 700-800 लीटर पानी में घोलकर बोने के तुरन्त बाद प्रति हेक्टेयर छिड़काव कर देना चाहिए।

कीट नियन्त्रण- फसल को दीमक से बचाने के लिए फोरे>-१० जी की २५ किग्रा। मात्रा बीज बोते समय कूंड में प्रयोग करते हैं। पौधों और पत्तियों को काटने वाले कीड़ों से बचाने के लिए 1.25 ली इण्डोसल्फान 35 ई सी का 800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। तना मक्खी से रोक थाम के लिए 15 किलोग्राम थिमेंट प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई से पूर्व खेत में मिला देना चाहिए ।

कण्डुवा रोग-कण्डुवा रोग नियन्त्रण के लिए कार्बेन्डजिम अथवा कार्बाक्सीन 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से बीज का उपचार करना चाहिए । यदि अरगट रोग का बाजरे में प्रकोप है तब इसके नियन्त्रण हेतु जिनेव 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 2 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 700-800 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए ।

कटाई एवं मड़ाई- बाजरे की फसल लगभग तीन महीने में पककर तैयार हो जाती है । आमतौर पर खड़ी फसल में पौधों को झुकाकर बालियों को दरांती से काटकर खलिहानों में सूखने के लिए डाल देते हैं तथा सूखने पर बैलों से मड़ाई कर एवं ओसाकर दाने को अलग कर लिया जाता है। कभी-कभी खड़ी फसल को काटकर भी बालियों को अलग कर लिया जाता है।

उपज-इस प्रकार से की गयी खेती में संकर जतियों से 19-30 कुन्तल प्रति हेक्टेयर उपज होती है ।

भिण्डी की खेती

भिण्डी कपास कुल का उष्ण कटिबन्धीय पौधा है। इसकी खेती भारत में बहुत प्राचीन काल से होती आ रही है। इसकी पत्तियों का रस औषधियों में काम आता है तथा डण्ठल को कुचल कर गुड़ या शवक्कर को साफ करने के लिये एक चिकना लसलसा घोल तैयार किया जाता है।

मिट्टी-

इसकी खेती हर प्रकार की भूमि में की जा सकती है लेकिन दोमट मिट्टी इसके लिये सर्वोत्तम होती है।

खेत की तैयारी -

एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करके दो या तीन बार हैरो या देशी हल से जुताई करके पाटा चला कर समतल भूमि तैयार की जाती है।

खाद तथा उर्वरक -

उर्वरक की मात्रा मिट्टी की जाँच के अनुसार निर्धारित की जाती है। जुताई के पूर्व लगभग 200क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला देना चाहिये।

खाद के अभाव में उर्वरकों का प्रयोग निम्नलिखित प्रकार से करते हैं।

नाइट्रोजन - 80 किग्रा प्रति हेक्टेयर

फॉस्फोरस - 50 किग्रा प्रति हेक्टेयर

पोटाश - 50 किग्रा प्रति हेक्टेयर

नाइट्रोजन की अधी मात्रा बुवाई के पहले   मात्रा बुवाई के35-40 दिन बाद प्रयोग करना चाहिए।

प्रजातियाँ

सामान्यतः भिण्डी कीअनेक किस्में पायी जाती हैं। लेकिन उन्नत किस्मों का विशेष महत्व है। यह रोग रोधी होती हैं।

कुछ प्रमुख प्रजातियाँ निम्नलिखित हैं -

1.कल्यानपुरटा 1, 2,3, 4, 1. पूसा सावनी,3. पूसा मखमली, 4. पंजाब पद्मिनी, 5. परभनी क्रान्ति, 6.अर्का अनामिका

वर्षा कालीन बुवाई का समय

बोआई जून के दूसरे सप्ताह से जुलाई के मध्य तक की जाती है।

बीज की मात्रा -

वर्षा काल में 10-12 किग्रा० बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

ग्रीष्म कालीन बुवाई का समय

ग्रीष्म ऋतु में मध्य फरवरी से मार्च के दूसरे सप्ताह तक बोआई की जाती है।

बीज की मात्रा -

ग्रीष्मकालीन फसल के लिये 18-20 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

बोने की विधि

दाने की बुवाई कतारों में की जाती है। ग्रीष्मकालीन ऋतु में कतार से कतार30 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी30 सेमी रखी जाती है। वर्षा ऋतु वाली फसल में कतार से कतार 60 सेमी तथा पौधे से पौधे दूरी 45 सेमी रखनी चाहिये।

बोआई एवं जल निकास

बोआई के बाद तुरन्त सिंचाई करनी चाहिये। ग्रीष्मकाल में सप्ताह में एक बार सिंचाई करना चाहिये। वर्षा ऋतु में यदि खेत में पानी भर जाये तो तुरन्त उसे निकाल देना चाहिये।

निराई - गुड़ाई पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में दो-तीन बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिये जिससे खपरपतवार नष्ट होकर फसल की वृद्धि अच्छी हो सके। रासायनिक विधि से खरपतवार नियन्त्रण के लिये बोआई से पहले एक किग्रा- बेसालिन रसायन को1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में छिड़काव करें।

कीट नियन्त्रण

हरा तैला

यह 2 मिमी। लम्बा की**ट** है इससे पत्तियाँ पीली एवं पौधों की वृद्धि रूक जाती है। डाइमेक्रान 25 ई.सी.की1.5 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिये।

चित्तीदार सूंडी

यह भूरे या सफेद रंग की होती है। यह पौधे के सभी भागों में घुसकर उसे खाती है।1-1.5 मिली। इण्डोसल्फान35 ई.सी. को एक लीटर पानी के हिसाब से घोलकर छिड़काव करने से यह नष्ट हो जाती है।

रोग नियन्त्रण

पीला शिरा मौजेक -

यह रोग वाइरस से फैलता है। इनमें पत्ती सिकुड़कर पीली हो जाती है। एक लीटर पानी में1.5 मि।ली। साइपरमेथ्रिन मिलाकर छिड़काव करने से इस रोग की रोकथाम होती है।

पत्तियों का धब्बा रोग -

यह फफूंदी से फैलता है। इसमें पत्तियाँ सिकुड़कर गिरने लगती हैं। इसके रोकथाम के लिये सुटोक्सस के 0.2 घोल का छिड़काव करना चाहिये।

उपज

ग्रीष्मकालीन फसल से अौसतन 50-60क्विंटल तथा वर्षाकालीन फसल से 80-100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज मिल जाती है।

भण्डारण

भिण्डी को तोड़कर छायादार स्थान में फैलाकर रखना चाहिये।

चना की खेती

हमारे देश में दलहनी फसलों में चने की फसल का पहला स्थान है। चने की फसल उगाने से भूमि की उपजाऊ शक्ति बनी रहती है, क्योंकि इसके पौधों की जड़ों में वायुमण्डल की नाइट्रोजन को एकत्र करने वाले जीवाणु पाये जाते हैं। चने में अौसतन 21 प्रोटीन पायी जाती है। चने से दाल, नमकीन तथा अनेक प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाये जाते हैं। सब्जी के रूप में छोला अति लोकप्रिय है। इसकी पत्तियों को साग के रूप में प्रयोग किया जाता है।

क्षेत्रफल तथा उत्पादन

चने की खेती मध्य प्रदेश में सबसे अधिक की जाती है। उत्तर प्रदेश में बाँदा, हमीरपुर, झाँसी, चित्रकूट, जालौन, इलाहाबाद कानपुर अदि चना उत्पादन के अग्रणी जिले हैं।

जलवायु

चने की खेती के लिए शुष्क एवं ठण्डी जलवायुअवश्यक होती है लेकिन फलियों एवं दानों के विकास के लिए तापमान सामान्य होना चाहिए। पाला से फसल का नुकसान होता है। कम वर्षा वाले क्षेत्र चने की खेती के लिए उपयुक्त होते हैं।

मिट्टी

चना की खेती लगभग सभी प्रकार की मिट्टीयों में की जा सकती हैं किन्तु उचित जल-निकास वाली दोमट या भारी दोमट तथा परवा व मार भूमियाँ इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती हैं।

खेत की तैयारी

चने की खेती के लिए ज्यादा खेत की तैयारी की अवश्यकता नहीं पड़ती है। बल्कि ढेलेदार मिट्टी जिससे जड़ क्षेत्र में वायु संचार अच्छा रहता है, इसकी बढ़वार के लिए उपयुक्त होती

है। खेत की एक जुताई मिट्टी पलट हल से तथा एक से दो जुताईयाँ देशी हल या कल्टीवेटर करने के बाद खेत में पाटा लगाकर खेत को समतल कर देना चाहिए।

खाद तथा उर्वरक

जीवाणुओं द्वारा भूमि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण बढ़ाने के लिए बीज को बोने से पहले विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचारित कर लेना चाहिए। इसकी खेती के लिए सामान्यतः15-20 किग्रा। नाइट्रोजन, 45-50 किग्रा। फास्फोरस तथा 20 किग्रा। गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से कूड़ में बोते समय देना चाहिए।

उन्नशील प्रजातियाँ

समय से बुवाई के लिए अवरोधी, राधे तथा अधार एवं देर से बुवाई के लिए उदय, पूसा-372 तथा पन्त-जी-186 प्रजातियाँ उपयुक्त होती हैं जबकि काबुली चने की उन्नतशील प्रजातियों में पूसा-1003 शुभ्रा, उज्जवल एवं चमत्कार प्रमुख हैं।

बुवाई का समय

चने की बुवाई हेतु अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा सबसे उपयुक्त होता है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है।

बीज की मात्रा

चने की छोटी एवं सामान्य दाने वाली प्रजातियों के लिए 75-100 किग्रा। प्रति हेक्टेयर तथा बड़े दाने एवं काबुली चने की प्रजातियों के लिए 90-100 किग्रा। प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

बीज उपचार

चने की फसल में बीज शोधन हेतु दो ग्राम थीरम के साथ1 ग्राम कार्बोन्डाजिम का मिश्रण प्रति किग्रा. बीज की दर प्रयोग करते हैं। इसके पश्चात् बीज को चने के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना चाहिए। इसके लिए एक पैकेट (200 ग्राम) कल्चर10 किग्रा। बीज के लिए पर्याप्त होता है। राइजोबियम कल्चर का साफ पानी में घोल बनाकर10 किग्रा बीज की दर बीज के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथ से इस प्रकार मिलाना चाहिए, जिससे बीज के ऊपर एक समान हल्की काली परत बन जाये। उपचारित बीज को पक्के फर्श या पालीथिन शीट पर पतली परत के रूप में 2-3 घण्टे तक फैलाने के बाद बोना चाहिए। उपचारित बीज को तेज धूप में नहीं सुखाना चाहिए।

बोने की विधि -

चने की बुवाई पंक्तियों में करना चाहिए।असिंचित क्षेत्रो में पंक्तियों की दूरी30 सेमी तथा सिंचित क्षेत्र में 45 सेमी रखनी चाहिए। बुवाई देशी हल या सीड ड्रिल से करते हैं।

सिंचाई तथा जल निकास -
चने में पहली सिंचाई बुवाई के 45 से 60 दिन बाद (फूल आने से पहले) तथा दूसरी सिंचाई फलियों में दाना बनते समय करना चाहिए। यदि जाड़े में शीतकालीन वर्षा हो जाय तो दूसरी सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। चने में फूल आने के समय सिंचाई नहीं करना चाहिए। खेत से अतिरिक्त पानी निकालने का उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण
बीज बोने के 20-25 दिन पर खेत में खड़े खरपतवारों को खुरपी से एक निराई कर निकाल देना चाहिए। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण के लिए खेत में फसल बोने के 24 से 48 घण्टे पूर्व फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन) रसायन की 2.2 लीटर मात्रा को 800-1000 लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रेयर से एक समान छिड़काव कर देना चाहिए। इसके पश्चात् खेत को एक समान बखर से या कल्टीवेटर से दवा को खेत मेंअच्छी प्रकार से मिला देना चाहिए।

खुदाई या शीर्ष कर्तन
फसल की15 से 20 सेमी ऊँचाई होने पर उसके शीर्ष भाग को दो-तीन पत्तियों सहित तोड़ देते हैं। जिससे पौधे में शाखाएँ अधिक निकलती हैं अौर फूल एवं फलियाँ अधिक बनती हैं।

फसल सुरक्षा

कीट नियंत्रण
चने की फसल को अनेक कीट हानि पहुँचाते हैं। इनमें कटुआ, सेमी लूपर तथा फलीबेधक प्रमुख हैं। कटुआ कीट की सूडियाँ रात में पौधों को जमीन की सतह से काट देती हैं अौर सेमी लूपर की हरे रंग की सूडियाँ पत्तियों, कलियों, फूलों एवं फलियों को नुकसान पहुँचाती हैं। चने की फलीबेधक कीट की सूडियाँ फलियों में छेद कर दानों को खा जाती हैं। उपरोक्त कीटों के नियंत्रण लिए गर्मी की जुताई एवं समय से बुवाई करना चाहिए तथा 50-60 बड़े पर्चर प्रति हेक्टेयर खेत में लगाना चाहिए। कीटों का अधिक प्रकोप होने पर क्विनालफॉस 25 ईसी रसायन की २ लीटर मात्रा को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर देना चाहिए।

रोग नियन्त्रण
चने की फसल में मुख्य रूप से जड़ सड़न एवं उकठा नामक रोग लगते हैं। जड़ सड़न प्राय: पौध की प्रारम्भिक अवस्था में लगता हैअौर पौधे सूख जाते हैं। जबकि उकठा रोग फसल की किसी भी अवस्था में लग सकता है। उकठा रोग से पूरा पौधा पीला पड़कर सूख जाता है। जड़-सड़न रोग के नियन्त्रण के लिए फसल कोअक्टूबर के स्थान पर नवम्बर में बुवाई करना चाहिए।

जबकि उकठा रोग के नियन्त्रण के लिए बीज को देर से बुवाई करना चाहिए। खेत की गर्मी की जुताई करने सेअौर उस खेत में3-4 वर्ष तक चने की फसल न बोने से रोगकारी जीव मर जाते हैं अौर उकठा का प्रभाव काफी कम हो जाता है।

मटर की खेती

मटर एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। इसका प्रयोग सब्जी एवं दाल के रूप में किया जाता है। सब्जी वाली मटर के ताजे हरे दानों सेअनेक प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जाते हैं अौर इन ताजे हरे दानों का प्रयोग डिब्बा बन्दी करके उस समय भी किया जाता है, जब बाजार में ताजी मटर उपलब्ध नहीं हो पाती है। मटर के दानों को सुखाकर चाट के रूप में प्रयोग किया जाता है। मटर के सूखे दानों में अौसतन 22 प्रोटीन पाई जाती है। दाल वाली फसल होने के कारण इसकी जड़ें मृदा में नाइट्रोजन एकत्रित करती है।

क्षेत्रफल एवं उत्पादन क्षेत्र

उत्तर प्रदेश में मटर की खेती बड़े क्षेत्रफल पर होती है।आगरा मण्डल में इसकी खेती सर्वाधिक क्षेत्र पर की जाती है।

जलवायु

मटर के लिए शुष्क एवं ठण्डी जलवायु अधिक उपयुक्त होती है किन्तु पाले से इस फसल को अधिक नुकसान होता है।

मिट्टी

मटर की अच्छी फसल लेने हेतु उचित जल-निकास वाली दोमट या बलुई दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी

अच्छी फसल लेने के लिए एक जुताई मिट्टी पलट हल से तथा दो से तीन जुताइयाँ कल्टीवेटर या हैरो से करके खेत में पाटा लगाकर समतल एवं ढेले रहित कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

संतुलित पोषक तत्वों को प्रदान करने के लिए खेत का मृदा परीक्षण करनाअवश्यक है। मृदा परीक्षण न करा पाने की दशा में खेत में बुवाई से पहले 60-80 कुन्तल सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए। बुवाई के समय ही खेत में 20 किग्रा। नाइट्रोजन, 60 किग्रा। फास्फोरस तथा 40 किग्रा। पो टाश एवं 20 किग्रा गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से बीज के नीचे कूँड में डालना चाहिए।अधिक उपज वाली बौनी प्रजातियों में बोने के समय 20 किग्रा। नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर अतिरिक्त देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ -

मटर की उन्नत प्रजातियों में रचना, इन्द्र,अपर्णा, शिखा, जय,अमन, सपना, प्रकाश, पूसा, प्रभात, पन्त मटर -5 मालवीय मटर -२ एवं मालवीय मटर-15 तथा विकास आदि प्रमुख हैं।

बुवाई का समय
मटर की बुवाई का सबसे उपयुक्त समय अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा होता है किन्तु इसे15 नवम्बर तक बोया जा सकता है।

बीज की मात्रा
लम्बे पौधों वाली प्रजातियों की 80-100 किग्रा तथा बौनी प्रजातियों की 125 किग्रा। बीज प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यक होती है।

बीज उपचार
बीज जनित रोगों से बचाव के लिए 2ग्राम थीरम एवं 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा. बीजअथवा 4 ग्राम ट्राइकोडरमा प्रति किग्रा.बीज की दर से शोधित करते हैं। तत्पश्चात बीज को मटर के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से 1 पैकेट (200 ग्राम) प्रति 10 किग्रा बीज की दर से उपचारित कर छाया में सुखाने के बाद बोया जाता है।

बोने की विधि
उपचारित बीज को हल के पीछे कूँड में या पन्तनगर जीरों ड्रिल ड्रिल द्वारा बुवाई की जाती है। लम्बी प्रजातियों की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी तथा बौनी प्रजातियों की 20 सेमी एवं गहराई 4-5 सेमी रखते हैं।

सिंचाई एवं जल निकास
फसल में फूलअने के समय खेत में उचित नमी होना अनिवार्य है। इस समय यदि खेत में नमी की कमी हो तो सिंचाई करना आवश्यक होता है। दूसरी सिंचाई फलियों में दाना बनते समय करनी चाहिए। मटर खेत मेंअधिक नमी को सह नहीं पाती इसीलिए खेत में अवश्यकता से अधिक पानी को जल-निकास नाली द्वारा बाहर निकाल देना चाहिए।

निराई-गुड़ाई
फसल के प्रारम्भ में बुवाई के 40-45 दिनों तक खेत में खर-पतवार नहीं होना चाहिए अन्यथा फसल की पैदावार घट जाती है। इसके लिए बीज बोने के 30-35 दिन पर खुरपी द्वारा एक निराई कर खरपतवारों तथा अवांछित पौधों को खेत से निकाल देना चाहिए।

फसल सुरक्षा

कीट नियन्त्रण
तने की मक्खी, पत्ती सुंरगक तथा फली बेधक मटर के मुख्य कीट हैं। फली बेधक कीट की हरी सूडियाँ मटर की फलियों में छेद करके अन्दर ही अन्दर फली के दानों को खा

जाती हैं।

उपरोक्त कीटो के प्रभावी नियन्त्रण के लिए फसल की समय से बुवाई करना चाहिए। फलीबेधक कीट को नियन्त्रित करने के लिए मोनोक्रोट्रोफास 36 एस।एल। की 1 लीटर मात्रा या क्विनालफास 25 ई.सी.रोग नियन्त्रण

मटर की फसल में मुख्य रूप से बुकनी या चूणिलअसिता रोग तथा मृदोमिलअसिता रोग लगते हैं। बुकनी या चूर्णिलअसिता रोग लगने पर पत्तियों पर सफेद रंग के फफूँद का चूर्ण या पाउडर जमा हो जाता है। जो बाद में भूरे रंग का हो जाता है। मृदुरोमिलअसिता में पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले धब्बे तथा निचली सतह पर रूई जैसे सफेद रंग की फफूँद दिखाई देती है जिससे बाद में पत्तियाँ सूख जाती हैं।

उपरोक्त रोगों के नियन्त्रण के लिए रोग रोधी प्रजातियों समय से बुवाई करना चाहिए तथा उस खेत में 2-3 वषाô तक मटर की बुवाई नहीं करनी चाहिए। बुकनी या चूर्णिलअसिता रोग लगने पर गंधक 0 का घुलनशील चूर्ण की 2 किग्रा। तथा मृदुरोमिलअसिता रोग लगने पर मैकोजेब-75 डब्ल्यू.पी. की 2 किग्रा मात्रा को 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई, मड़ाई तथा भण्डारण

हरी मटर की फली की तुड़ाई 10-12 दिनों केअन्तर पर 3-4 बार करते हैं। जबकि दाल वाली फसल मार्च के अन्त में पककर तैयार हो जाती है, जिसकी कटाई एक बार में कर ली जाती है। मड़ाई बैलों या थ्रेसर द्वारा की जा सकती है।

हरी मटर के दानों का भण्डारण डिब्बाबन्दी के रूप में शीतगृह में तथा सूखे दानों को भण्डारगृह में रखा जाता है।

उपज

उन्नत विधि से खेती करने पर हरी फलियों की उपज अौसतन 60-70 कु. प्रति हेक्टेयर तथा दानों की उपज 25-30 कु। प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है।

आलू की उन्नत खेती

परिचय तथा क्षेत्र-

रबी की फसलों मेंअलू एक महत्त्वपूर्ण फसल है। सब्जी के रूप मेंअलू का प्रयोग सर्वाधिक प्रचलित है।

इसमें मण्ड (स्टार्च) के अतिरिक्त प्रोटीन तथा विटामिन पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

मिट्टी

आलू की खेती लगभग सभी प्रकार की मुलायम मिट्टी में की जाती है परन्तु अच्छे जल निकास वाली बलुई-दोमट मिट्टी जिसका pH मान 6 से 7 के बीच हो सर्वोत्तम रहती है। अधिक नमी से सड़ाव का रोग लग जाता है।

खेत की तैयारी

खरीफ में चरी या मक्का की फसल लेने के बाद आलू बोया जाता है।अधिक उपज के लिए खेत को अधिक से अधिक भुरभुरा बनाया जाता है। इसके लिए मिट्टी पलट हल से 1-2 जुताई करने के बाद 3-4 बार देशी हल से जुताई करनी चाहिए। यदि खेत में नमी की कमी हो तो जुताई के पहले पलेवा कर लेना चाहिए। पलेवा के समय ही 20 ई. सी. का गामा वी.एच. सी (लिण्डेन) 3-4 लीटर पानी में मिलाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए।

खाद तथा उर्वरक

कम समय में अधिक उपज के कारण आलू की फसल को खाद तथा उर्वरकों की अधिक आवश्यकता होती है। सामान्यतः प्रति हेक्टेयर 100-150 किग्रा नाइट्रोजन, 80-100 किग्रा फाँस्फोरस तथा 80-150 किग्रा पोटाश की आवश्यकता होती है इसके लिए 250-300 कुन्तल गोबर की खाद सितम्बर के प्रारम्भ में खेत में फैलाकर जुताई कर देनी चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

क) मैदानी भागों के लिएअगेती फसलें

कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरीअलंकार, कुफरीअशोका तथा कुफरी ज्योति। यह किस्में 80 से 90 दिन में तैयार हो जाती हैं।

दीर्घकालीन प्रजातियाँ

कुफरी बहार, कुफरी बादशाह, कुफरीअनन्द, कुफरी चिपसोना, कुफरी सिन्दूरी (सी. 140) कुफरी चमत्कार, कुफरी देवा 3804। ये प्रजातियाँ लगभग 120 दिन में पककर तैयार हो जाती हैं।

ख) पहाड़ी क्षेत्रों के लिए

कुफरी ज्योति, कुफरी जीवन, कुफरी शीतमान तथा कुफरी कुन्दन उत्तम किस्में मानी जाती हैं।

बुवाई का समय

पहाड़ों पर सामान्यतःआलू की फसल गर्मी प्रारम्भ होने पर बोयी जाती है। मार्च से प्रारम्भ होकर मई तक चलती है। मैदानी क्षेत्रों में आलू की फसल 25 सितम्बर से 15नवम्बर तक बोयी जाती है।

बीज की मात्रा तथा उपचार

बीज की मात्रा पँक्तियों की दूरी तथा बीज के आकार पर निर्भर करती है। 2.5 सेमी व्यास या 50 ग्राम वजन के बीज की मात्रा 20-25 कुन्तल प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होती है। समूचे तथा कटे हुए दोनों प्रकार के बीजों का प्रयोग किया जाता है। काटते समय ही इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक टुकड़े में कम से कम 2 या 3 आँखें हों अौर उसका वजन 50 ग्राम हो। काटने के बाद 0.3% बोरिक एसिड के घोल (3 ग्राम प्रति लीटर पानी में) बनाकर 30 मिनट तक डुबाने के बाद सुखा लेना चाहिए। बीज को डाईथेन एम-45 से भी उपचारित कर सकते हैं। उपचारित करने के 10-20 घण्टे बाद बीज बोना चाहिए।

बुवाई की विधि

आलू की बुवाई प्रायः दो विधियों से की जाती है।

1. चौरस क्यारियों में

चौरस क्यारियों में बीज 3-4 सेमी गहरा बोया जाता है। जब आलू जमकर बढ़ने लगता है तो 10 सेमी ऊँची मेंड़ बना दी जाती है।

2. मेंड़ों पर

इस विधि में खेत में मेंड़ बनाकर उस पर लगभग 5-7सेमी नीचे आलू बो दिया जाता है। कतार से कतार की दूरी 45- 50 सेमी तथा बीज से बीज की दूरी 15-20 सेमी रखी जाती है।

सिंचाई

पहली सिंचाईअलू बोने के लगभग 20-25 दिन बाद करनी चाहिए। भारी मिट्टी में 3-4 सिंचाई तथा हल्की मिट्टी में 5-6 सिंचाई पर्याप्त मानी जाती है।आलू की फसल में हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

निराई - गुड़ाई

आलू की फसल की निराई के पश्चात् पौधों पर मिट्टी-चढ़ा देनी चाहिए बुवाई के लगभग 30-35 दिन बाद मिट्टी चढ़ाई जाय।

फसल सुरक्षा

क) रोगों की रोकथाम-

आलू की फसल मेंअगेती झुलसा, पछेती झुलसा, ब्लैक स्कार्फ, वार्ट कोढ़, तथा पत्ती मोड़क बीमारियाँ लगती हैं। इससे बचने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए।

1.अगेती तथा पछेती झुलसा
दो किग्रा 0û 2% डाईथेनजेड-78 या डाईथेन एम 45 का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर रोगों के लक्षण दिखाई पड़ते ही छिड़काव कर देना चाहिए। आवश्यकतानुसार इसे 15 दिन के अन्तर पर दोहरा देना चाहिए।

2. ब्लैक स्कार्फ
आलू के बीज को एगलाल-3 के 0.5 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबोकर बोना चाहिए।

3. वाइरस (विषाणु)
इसके बचाव के लिए केवल प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। रोग ग्रस्त पौधों को कन्द सहित उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। मेटासिस्टाक्स 25 ई. सी. की 1लीटर मात्रा को 750-1000 लीटर पानी में घोलकर 2-3 छिड़काव करना चाहिए।

ख) कीड़ों की रोकथाम
फुदका, माहू, सूड़ी व छेदक के लिये एक लीटर मेटासिस्टाक्स 25 ई. सी.को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर 3-3 सप्ताह के अन्तर से छिड़काव करते रहना चाहिए। दीमक, कटुआ, व सफेद सूंड़ी के नियन्त्रण हेतु सिंचाई के समय 20 ई. सी. क्लोरोपायरीफाँस की 2-3 लीटर प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

खुदाई
कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरीअलंकार, कुफरी ज्योति की खुदाई बोने के 90 दिन के बाद प्रारम्भ की जाती है। कुफरी चमत्कार, कुफरी सिन्दूरी तथा कुफरी देवा को 115-120 दिन में खोदते हैं।

उपज
मैदानी क्षेत ट्रों मेंअलू 325- 400 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तथा पहाड़ी क्षेत ट्रों में 200-250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर पैदा होता है।

लौकी की खेती
लौकी भारत की एक प्रमुख सब्जी है। सब्जी के अतिरिक्त इसका उपयोग मिठाई, हलवा, रायता व अौषधि बनाने में किया जाता है।

जलवायु
लौकी के लिए गर्म तथाअर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है किन्तु पाले से इसे बहुत नुकसान होता है।अधिक वर्षा एवं बादल वाले दिनों में कीड़ों एवं बीमारियों का प्रकोप अधिक होता है।

मिट्टी
इसे विभिन्न प्रकार की मिट्टीयों में उगाया जा सकता है लेकिन उचित जल धारण क्षमता वाली जीवाँशयुक्त हल्की दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी
खेत की पहली जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद 3-4 जुताइयाँ कल्टीवेटर से करके खेत को समतल कर लेना चाहिए।

खाद तथा उर्वरक

20 से 25 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी के समय ही मिला देना चाहिए। खेत की मिट्टी की जाँच न करा पाने की दशा में 60 किग्रा नाइट्रोजन, 30 किग्रा फास्फोरस, तथा 30 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में देना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय तथा नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा पौधे की जड़ के चारों अोर दो बार में देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ

अ)लम्बे फल वाली प्रजातियाँ

पूसा समर प्रालिफिक लाँग, पूसा नवीन, कल्यानपुर हरी लंबी, आजाद हरित, आजाद नूतन आदि।

ब) गोल वाली प्रजातियाँ

पूसा ,प्रालिफिक राउण्ड, पूसा सन्देश, पूसा मंजरी आदि।

स) संकर प्रजातियाँ

पूसा मेघदूत,अजाद संकर-1, पूसा मंजरी, पूसा संकर-3आदि।

बुवाई का समय

ग्रीष्मकालीन फसल के लिए जनवरी-मार्च तथा वर्षाकालीन फलस के लिए जून-जुलाई का महीना सर्वोत्तम होता है।

बीज की मात्रा

एक हेक्टेयर की बुवाई के लिए 4-5 किग्रा। बीज पर्याप्त होता है। एक स्थान पर 3-5 सेमी गहराई पर दो बीज बोना चाहिए।

बोने की दूरी
पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.5 से 2.5 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 1.0 मीटर रखते हैं।

सिंचाई
ग्रीष्मकालीन फसल में 4-5 दिन केअन्तर पर तथा वर्षाकालीन फसल में वर्षा न होने पर ही आवश्यकता पड़ती है जबकि जाड़े में 10-15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी पड़ती है।

निराई-गुड़ाई
लौकी की फसल के साथअनेक प्रकार के खरपतवार उगअते हैं।अतः इनके नियंत्रण के लिए ग्रीष्मकालीन फसल में 2-3 बार तथा वर्षाकालीन फसल में 3-4 बार निराई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

कीट नियंत्रण
लौकी में मुख्य रूप से रेड पम्पकिन बीटिल एवं फल की मक्खी का प्रकोप होता है। रेड पम्पकिन बीटिल मुख्य रूप से पत्तियों को खाता है तथा पत्तियों में छेद बना देता है। कभी-कभी यह फलों को भी खाता है जिससे पौधे सूख जाते हैं। फल मक्खी लौकी के फलों में प्रवेश कर अन्दर अण्डे देती है तथा अण्डों से निकली सूडियाँ फल को खाती हैं तथा फल सड़ने लगता है।

उपरोक्त कीटों के नियन्त्रण के लिए रोगार अथवा डाइमेथोएट की 2 मिली लीटर मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार 10 दिनों के अन्तराल से छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियन्त्रण
बुकनी या चूर्णिल फफूंदी तथा मृदुरोमिलअसिता लौकी के प्रमुख रोग हैं। चूर्णिल फफूंदी रोग में पत्तियों एवं तनों पर सफेद खुरदरा एवं गोलाकार जाल सा दिखाई देता है जिससे पौधे की वृद्धि रूक जाती है। मृदुरोमिल आसिता रोग में पत्तियों की निचली सतह पर धब्बे बन जाते हैं जो ऊपर से पीले या भूरे रंग के दिखाई देते हैं।

चूर्णिल फफूंदी रोग के नियन्त्रण के लिए सल्फेक्स की 3 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। मृदुरोमिल आसिता के नियन्त्रण के लिए 2 ग्राम/मैन्कोजेब प्रति लीटर पानी की दर से 10-15 दिन के अन्तराल

पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा रोगी पौधे को शुरू में ही उखाड़कर जला देना चाहिए तथा उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए।

तोड़ाई
फलों के पूर्ण विकसित होने पर किन्तु कोमल अवस्था में ही किसी तेज चाकू द्वारा पौधे से अलग कर देना चाहिए।

उपज
उन्नतशील प्रजातियों की उपजऔसतन 150-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तथा संकर प्रजातियों की उपज 400 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

बैंगन की खेती
बैंगन की खेती हमारे देश में आदि काल से होती आरही है। इसको विभिन्न प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक उत्पन्न किया जा सकता है। एक वर्ष में बैंगन की 3 फसलें ली जा सकती हैं। कम खर्च तथा अधिक आमदनी के लिये किसानों को बैंगन की खेती करनी चाहिये।

मिट्टी
बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिये सर्वोत्तम है। दोमट भूमि में भी बैंगन अच्छी उपज देता है।

खेत की तैयारी
मिट्टी पलट हल द्वारा गहरी जुताई करने के बाद खेत को 5-6 जुताइयाँ देशी हल से करके, तैयार कर लेना चाहिये।

खाद एवं उर्वरक

लगभग 200-250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद खेत की प्रारम्भिक तैयारी के समय खेत में मिलाना चाहिये। इसके अतिरिक्त 100 कि.ग्रा. नत्रजन - 50 कि.ग्रा.फॉस्फोरस एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर डालना चाहिये। नत्रजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा आखिरी जोताई के समय खेत में मिला देना चाहिये। नत्रजन की शेष मात्रा को 2 बार में, रोपाई के एक माह तथा 2 माह बाद दे देना चाहिये।

उन्नत किस्में

बैंगन की उन्नत किस्मों को फलों के आकार के अनुसार 2 भागों में बाँटते हैं -

1. लम्बा बैगन

2. गोल बैगन

लम्बे फलों वाली प्रमुख प्रचलित किस्में -

पूसा पर्पिल लाँग, पूसाअनमोल, पूसा क्रान्ति, पूसा सम्राट, पूसा पर्पिल क्लस्टर, इत्यादि

गोल फलों वाली प्रमुख प्रचलित किस्में

पूसा पर्पिल राउण्ड, पन्त ऋतुराज, टाइप -3, पंजाब, बहार आदि।

बैंगन की संकर किस्में

पन्त संकर बैंगन -1, पूसा हाइब्रिड - 1, पूसा हाइब्रिड -6, नरेन्द्र देव हाइब्रिड -1, नरेन्द्र देव हाइब्रिड -6

बीजअौर बोआई

जाड़े की फसल के लिये जून-जुलाई में बीज बोये जाते हैं अौर रोपाई जुलाई-अगस्त में की जाती है।
गर्मी वाली फसल के लिए अक्टूबर, नवम्बर में नर्सरी में बीज बोये जाते हैं अौर पौध की रोपाई नवम्बर, से दिसम्बर के अन्त में की जाती है।

बरसात की फसल के लिए मार्च में नर्सरी में बीज बोये जाते हैं अौर अप्रैल मई में पौध की रोपाई की जाती है।

बीज की मात्रा

बीज को नर्सरी में बोकर पौध तैयार करते हैं। एक हेक्टेयर खेत के लिये लगभग 400 से 500 ग्राम बीज की पौध पर्याप्त रहती है।

पौध तैयार करना

एक हेक्टेयर की रोपाई करने के लिये लगभग ९0-100 वर्ग मीटर क्षेत्र में बीज बोना चाहिये। पौधशाला को 4-5 बार गुड़ाई करके मिट्टी को अच्छी प्रकार भुरभुरी बना लेते हैं तत्पश्चात् 15-20 से.मी. ऊँची व 1.25 मीटर चौड़ी तथा.आवश्यकतानुसार लम्बी नर्सरी बना लेते हैं। दो नर्सरी के बीच में 30 सेमी. चौड़ी नाली बनाते हैं इनका प्रयोग जल-निकास के लिये किया जाता है। इसके लिये 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीज

शोधन करते हैं। इसे थीरम या सेरेसान से शोधित करते हैं। ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में पौध 4 सप्ताह में तथा शरद ऋतु में 6-8 सप्ताह में रोपने योग्य हो जाती है।

पौध रोपाई

पौधशाला से पौध निकालने के लिये 2-3 दिन पहले हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये। पौध रोपण, तैयार खेत में लाइनों में शाम के समय या बादल वाले दिन करना चाहिये। लम्बे बैंगन की किस्मों में लाइन से लाइन की दूरी 60 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सेमी रखते हैं। गोल बैगन की किस्मों में लाइन से लाइन की दूरी 75 सेमी। तथा पौध से पौध की दूरी 60 सेमी। रखते हैं। तत्पश्चात् हल्की सिंचाई करनी चाहिये।

पूसाअनमोल (संकर), पंजाब बहार जैसीअधिक उपज देने वाली किस्म 90 60 सेमी की दूरी पर प्रत्यारोपित करना चाहिये।

सिंचाई एवं जल निकास

सिंचाई भूमि की किस्म एवं वातावरण पर निर्भर करती है।अमतौर पर गर्मियों में 7-8 दिन के अन्तर पर अौर सर्दियों में 12-15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते हैं।आवश्यकता से अधिक जल को अविलम्ब जल बाहर निकालना चाहिये अन्यथा पौध मर जाने का भय रहता है।

निराई-गुड़ाई

रोपने के 50-60 दिन तक खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिये। इसके लिये 2-3 निराइयों की आवश्यकता होती है। वर्षाकालीन फसल में 3-4 निराइयों की आवश्यकता होती है।

फसल सुरक्षा

कीट नियन्त्रण
शाखा तथा फल बेधक

इस कीट की सूँड़ी बढ़ी हुई शाखाओं में छेद करके अन्दर के भाग को खाती हैं। शाखायें मर जाती हैं पौध मुरझा जाती हैं। फलअने पर फलों में छेद करके खाते हैं जिससे फल सब्जी योग्य नहीं रह जाते हैं। सुमुसीडीन नामक दवा 150 मिली। मात्रा को 100 लीटर पानी में घोलकर 12-15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करते हैं। फलों को छिड़काव के7-8दिन बाद तुड़ाई करना चाहिए।

जैसिड (हरा तेला)

ये हरे रंग के छोटे-छोटे कीट होते हैं जो पत्तियों के निचले भाग में पाये जाते हैं। पत्तियों का रस चूसने के कारण पत्तियाँ मुड़ जाती हैं।

लाल माइट

यह एक छोटा सा कीट होता है जो पत्तियों का रस चूसकर उन्हें कमजोर बना देता है। पत्तियाँ पीली पड़कर गिरने लगती हैं। हरा तेला तथा लाल माइट की रोकथाम के लिये साइपरमेथिन दवा का 0।15 का घोल छिड़का जाता है।

रोग नियन्त्रण

आर्द्र पतन

यह रोग पौधशाला में उगे पौधों में लगता है। इससे पौधे भूमि स्तर पर ही गलने लगते हैं। नर्सरी में पौधों का मुरझाना अ ौर सूख जाना इस बीमारी का मुख्य लक्षण है।

रोकथाम

बीज कैप्टान या थीरम नामक फफूँदी नाशक दवा से 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिये।

बीज बोने के 10-15 दिन बाद नर्सरी में कैप्टान या थीरम 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

फल सड़न या फोमास्सिमअंगमारी

इस रोग में पत्तियों पर छोटे-छोटे गोल भूरे धब्बे बन जाते हैं। रोगी पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं। फल सड़कर जमीन में गिर जाते हैं।

रोकथाम

नर्सरी में थीरम या कैप्टान का 0।2 घोल बनाकर 7-8 दिन के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिये।

स्वस्थ व प्रमाणित बीज बोना चाहिये।

फलों की तुड़ाई

फल बढ़ जाने पर तथा रंग आजाने पर उन्हें तोड़ना चाहिये। फल तोड़ने में देर होने पर फलों का रंग फीका पड़ जाता है।और बीज कड़े हो जाते हैं। बैंगन का फल लगने के लगभग 8-10 दिन बाद तोड़ने योग्य हो जाता है।

उपज

बैंगन कीऔसत उपज 200-250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा संकर किस्मों की उपज 350-400 क्विंटल प्रतिहेक्टेयर होती है।

अभ्यास के प्रश्न

1. सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगाइये -

i.ज्वार की खेती किस भूमि पर करते हैं ?

क)बलुई दोमट ख)दोमट

ग)काली कपास मिट्टी घ) उपरोक्त में कोई नहीं

ii.ज्वार में नाइट ट्रोजन उर्वरक प्रयोग किया जाता है -

क)100 किग्रा प्रति हेक्टेयर ख)150 किग्रा प्रति हेक्टेयर

ग)120 किग्रा प्रति हेक्टेयर घ)इसमें से कोई नहीं

iii.ज्वार की फसल में पोटाश प्रयोग करते हैं -

क)100 किग्रा प्रति हेक्टेयर ख)40 किग्रा प्रति हेक्टेयर

ग)60 किग्रा प्रति हेक्टेयर घ) उपरोक्त में कोई नहीं

iv.बाजरे की संकुल प्रजति है -

क)आई सी एम बी 115 ख)डब्लू सी सी 75

ग)बी के 560 ग) उपरोक्त में सभी

v.बाजरे की संकर प्रजति है -

क)पूसा 322 ख)पूसा 23

ख)आई सी एम एच 451 घ) उपरोक्त में सभी

2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

i)बाजरा बी के 560..................दिन की फसल है ।

ii)दीमक के नियंत्रण हेतु..................कीटनाशक प्रयोग करते हैं।

iii)बाजरे की संकर प्रजति से..................कुन्तल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती हैं।

iv) पूसा प्रालिफिक लांग .... प्रजाति है।

v)दाने के लिए ज्वार का बीज..................किग्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है ।

vi)बैंगन की बुवाई हेतु.................. किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है ।

vii)लौकी के बीज का..................से उपचार किया जाता है ।

viii)बैंगन की खेती के लिए..................नाइट ट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रयोग की जाती है ।

3. सही कथनों पर (✓) सही तथा गलत पर (X) गलत का निशान लगाइये -

i)ज्वार की फसल दानें एवं चारे दोनों के लिए बोयी जाती है ।

ii)चारे के लिए ज्वार का बीज 50 किग्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है ।

iii)दाने के लिए ज्वार का बीज 12 से 15 किग्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है ।

iv)दानों के लिए ज्वार की फसल 115 दिन में पक कर तैयार हो जाती है ।

v)बाजरे की खेती के लिए दोमट भूमि उपयुक्त है ।

vi)बाजरे की बुवाई से पहले बीज को थीरम से उपचरित करते हैं ।

vii)आलू का प्रमुख रोग पिछेती झुलसा है।

viii) राधे चना की प्रजाति है।

ix) रचना मटर की प्रजाति है।

x) फलीबेधक चने का प्रमुख कीट नहीं है।

xi) हरा तेला बैगन का कीट है।

xii) चने के बीज का उपचार थीरम नामक रसायन से करते है ?

xiii) बैगन के बीज की मात्रा 400-500 ग्राम प्रति हे. लगती है।

4. निम्नलिखित में स्तम्भ `क' को स्तम्भ `ख' से मिलाइये -

5. i)आलू की पैदावार प्रति हेक्टेयर कितनी होती है ?

ii)आलू का बीज प्रति हेक्टेयर कितना प्रयोग किया जाता है ?

iii)बाजरे का उत्पादन प्रति हेक्टेयर कितना होता है ?

iv)बाजरे की फसल लगभग कितने दिनों में पककर तैयार हो जाती है ?

v)बाजरे की फसल में दीमक का नियन्त्रण किस कीटनाशक से करते हैं ?

vi)बाजरे की फसल में कण्डुआ रोग के नियन्त्रण हेतु कौन फंफूदी नाशक प्रयोग करते हैं ?

vii)ज्वार की फसल में उर्वरक कितनी मात्रा में प्रयोग करते हैं ?

viii)ज्वार की संकर प्रजातियों के नाम बताइये ?

ix)ज्वार की बुवाई का उपयुक्त समय क्या है ?

x)ज्वार के बीज को जमीन में कितनी गहराई पर बोते हैं ?

xi))बैंगन की दो संकर प्रजातियों के नाम बताइये ।

xii)बाजरे के लिए बीज प्रति हेक्टेयर कितने किलोग्राम प्रयोग किया जाता है ?

xiii) गोल लौकी की दो प्रजाति लिखिए

6.ज्वार की फसल में खाद तथा उर्वरकों की मात्रा देने का समय एवं विधि का वर्णन कीजिए।

7. ज्वार की फसल में लगने वाले कीट एवं रोग का वर्णन कीजिए।

8.ज्वार की संकर प्रजातियाँ कौन-कौन हैं ? उनके बोने का समय,विधि एवं औसत उपज बताइये ।

9. बाजरे की फसल में निराई-गुड़ाई खरपतवार तथा कीट नियन्त्रण के बारे में लिखिये ।

10.आलू के बोने का समय तथा बीज की मात्रा का विवरण दीजिए ।

11. बाजरे की संकर प्रजातियाँ एवं उनके पकने का समय तथा उपज बताइये ।

back

इकाई - 6 बागवानी एवं वृक्षारोपण

- **वाटिका अभिविन्यास**
- **बीज द्वारा प्रवर्धन, कायिक प्रवर्धन-कलम लगाना और दाब लगाना**
- **नीबू, पपीता एवं लीची की उन्नतिशील खेती**

वाटिका अभिविन्यास

वाटिका का अर्थ प्राय: फूलों की वाटिका से ही समझा जाता है । वाटिका चाहे विद्यालय की हो, घर की हो अथवा कहीं की हो, आस पास के वातावरण को आकर्षक व मनोहारी बनाती है ।

क्या आपने अपने विद्यालय की वाटिका को कभी ध्यान से देखा है ? यह वाटिका कैसे बनाई गई होगी ? इसे सुन्दरता कैसे प्रदान की गई होगी ? रंग बिरंगे फूलों वाले पौधे कैसे और किस प्रकार से लगाये गये होंगे ? क्या इन बातों पर आपने कभी विचार किया है? प्राय: वाटिका को तीन भागों में बाँट सकते है जैसे- पुष्प वाटिका, गृहवाटिका, एवं विद्यालय वाटिका ।

वाटिका कहाँ बनाई जाय, इसका आकार क्या हो, इसमें किस प्रकार के फूल एवं लुभावनी पत्तियों वाले पौधे लतर झाड़ीदार पौधे, पेड़ आदि किस स्थान पर लगाये जाय, इन सब बातों की जानकारी करना बहुत आवश्यक है। प्राप्त सुविधाओं में ही वाटिका लगाने वाला व्यक्ति यदि कुशल है, अच्छी सूझ बूझ वाला है तो वह कौशलपूर्ण रेखांकन द्वारा वाटिका को बहुत सुन्दर रूप में स्थापित कर सकता है। वास्तव में वाटिका लगाने के कुछ नियम हैं जिन्हें ध्यान में रखना चाहिए ।

मान लीजिए कि आपके विद्यालय का क्षेत्र छोटा है,ऐसी स्थिति में विद्यालय भवन एक किनारे बनाना चाहिए इस भवन के सामने वाटिका लगानी चाहिए ।यदि क्षेत्र बड़ा है तो विद्यालय भवन बीच में रखना चाहिए सामने शोभाकारी वृक्ष,हरियाली,फूलों के पौधे, झाड़ीदार पौधे और मौसमी फूलों की पट्टी आदि लगाना चाहिए ।पुष्प वाटिका में विचरण के लिए मार्ग तथा वाटिका के चारों ओर खूबसूरत बाड़ को स्थान देना चाहिए। विद्यालय

भवन और वाटिका के दृश्य में परस्पर मेल होना चाहिए। इसी तरह से आपके घर के पास स्थित गृह वाटिका का व्यवस्थित अभिविन्यास भी होनी चाहिए ।

वाटिका एक कलात्मक विज्ञान है ।वाटिका लगाना एक कौशलपूर्ण, क्रमबद्ध प्रबन्धन तथा रेखांकन है जिसमें पौधों की ऊँचाई एवं फूलों की रंग योजना के अनुसार पौधे लगाये जाते हैं जिन्हें देखकर मन मस्तिष्क पर आकर्षक चित्र अंकित होता है।

वाटिका लगाते समय ध्यान देने योग्य बातें-

(क)पेड़ तथा पौधे सघन नहीं लगाने चाहिए ।

(ख)मार्ग के दोनों ओर झाड़ियाँ लगानी चाहिए। झाड़ियाँ ,सुन्दर पत्तियों,फूलों वाली होनी चाहिए ।

(ग)शोभाकारी वृक्ष तथा झाड़ीनुमा पेड़ एक किनारे पर लगाने चाहिए ।

(घ)लतायें स्तम्भों के सहारे लगानी चाहिए ।

(ङ)अलंकृत पत्तियों वाले तथा छाया चाहने वाले पौधे छायादार स्थानों में लगाने चाहिए ।

(च)वाटिका में फूलवाले पौधों को इस व्यवस्था के साथ लगाना चाहिए कि वर्ष के हर महीने फूल खिलते रहें।

(छ)वाटिका के प्रवेश द्वार पर भी सुन्दर सुगन्धित फूलों वाली लतायें लगानी चाहिए ।

(ज)पौधे चाहे क्यारियों में हों या मार्ग के दोनों किनारे अथवा अलग-अलग हों, सिंचाई के लिए क्यारी आवश्यकता के अनुसार बनानी चाहिए ।

झ)वाटिका में आकर्षण होना चाहिए। इसके लिए पौधों की अधिक से अधिक किस्में लगानी चाहिए ।

अलंकृत महत्त्व वाले पौधे

वृक्ष (पेड़)- गुलमोहर (नारंगी लाल),अमलताश (पीला), कचनार (गुलाबी,बैगनी, सफेद),गुलाचीन (गुलाबी,सफेद), सिलवर ओक आदि ।

फूलों एवं आकर्षक पत्तियों वाली झाड़ियाँ - एकेलिफा,क ट्रोटन, रातरानी, दिन का राजा, गुड़हल, (लाल,गुलाबी,पीला,बैगनी,सफेद फूल) कनेर (लाल, सफेद, पीला फूल), इक्जोरा, मेंहदी, चांदनी,नीलकांटा, हरसिंगार,सावनी, बेला, कमिनी, सावनी, बोगनवीलिया।

लतायें - वोगन वीलिया, ऐन्टीगोनन लेप्टोपस, बिगनोनियां, टिकोमा ग्रैण्डी फ्लोरा आदि ।

गमले वाले पौधे (छायादार)- ऐस्पेरेगस प्रजति, ब्रायोफाइलम प्रजति, ड्रेसिना प्रजति, फर्न, सिन्सबेरिया (मर्जिनेटा सिलिण्ड्रिका), पोथाज, डिफेनबेकिया आदि।

गमले वाले (सामान्य)- गुलदाउदी (क्राइसेन्थिमम) कोलियस, ट्रेडेस्केन्शिया, गेंदा, (नाटे कद का),रजनी गन्धा, गुलाब, बेला आदि ।

शैलवाटिका पौधे- अगेव अमेंरिकाना, अगेव, फिलिफेरा, ऐन्थ्यूरिम प्रजति, कैक्टस (नागफनी) प्रजति फर्न, यूफोरबिया आदि ।

मौसमी फूलों वाले पौधे -

*जाड़ा - गेंदा, हालीहाँक, फ्लाक्स, कलेण्डुला, डहेलिया, कैण्डीटफ्ट, आदि ।

*गर्मी -सूरजमुखी, पोर्चूलाका, कोचिया, आदि ।

*बरसात -मुर्ग केश, बालसन, जीनियां आदि ।

*गुलाब - कलकतिया, चैती (देशी)।

आयतित किस्में -डेलहीप्रिंसेज, मोहिनी, सुजाता, सूर्योर्दय, स्वाती, गंगा, भीम चितवन, सुपरस्टार, हैप्पीनेस,क्वीन एलिजाबेथ हिमंगिनी, सुगन्धिनी, चितचोर, गोल्डेनशावर (लतर गुलाब) आदि ।

प्रवर्धन

क्या आपने कभी देखा है कि चने का एक दाना बो दिया जाता है तो एक पौधा तैयार हो जाता है ।चने के इस पौधे पर बहुत सी फलियां लगती हैं । हर फली में एक चना होता है । पकने के बाद यही चना पुन:बोने पर पौधा बन सकता है ।एक बीज से अनेक बीज और इन बीजों के द्वारा अनेक पौधे हमें प्राप्त होते हैं ।एक से अनेक पौधे तैयार करने को हम **प्रवर्धन** कहते है ।प्रवर्धन का दूसरा नाम **प्रसारण** भी है ।चने की तरह मटर, गेहूँ, धान, फलों,पौधे,सब्जियों और फूलों में भी प्रवर्धन क्रिया की जाती है।

बीज में एक नन्हा पौधा छिपा रहता है । जब बीज को अंकुरण के लिए उचित वातावरण,नमी और ताप मिल जाता है तो वह बीज अंकुरित हो कर पौधा बन जाता है ।

प्रवर्धन दो प्रकार का होता है - 1. बीज द्वारा प्रवर्धन2. कायिक प्रवर्धन

1. बीज द्वारा प्रवर्धन - बीज द्वारा जब बहुत से पौधे तैयार किये जाते हैं तब हम इस क्रिया को बीज प्रवर्धन कहते हैं ।बीज द्वारा पौध उगाने पर उसमें मातृ पौधे के सभी गुण आ जायें यह निश्चित नहीं रहता है ।

बीज प्रवर्धन के लाभ

क) पेड़ अधिक ऊँचे तथा फैलने वाले होते हैं ।

ख) पेड़ों की आयु अधिक होती है ।

ग) पेड़ बहुत मजबूत होते हैं ।

घ) बीमरियों तथा मौसम के प्रकोप को सहन करने की इनमें शक्ति होती है ।

ङ)प्रति पेड़ उपज अधिक होती है।

च)यह सबसे सरल एवं सस्ती विधि है।

बीज प्रर्वधन से हानि

क)पौधे मातृ वृक्ष के समान नहीं होते हैं।

ख)वृक्ष अधिक ऊँचा होने के कारण फलों की तुड़ाई में कठिनाई होती है।

ग)फल अच्छी गुणवत्ता वाले नहीं होते हैं।

घ)फल देर से लगता है।

2. कायिक प्रवर्धन

क्या आपने देखा है कि बीज के अलावा पौधे के दूसरे अंगों से भी एक नया पौधा तैयार हो जाता है ।जड़,तना, शाखा,पत्ती,कली मिलकर पौधे का पूरा शरीर बनाते हैं, जड़,तना,पत्ती,शाखा,कली (पत्रकली) पौधे की काया के अंग हैं।इसमें से पौधे के किसी भी अंग से नया पौधा तैयार करने को हम **कायिक प्रवर्धन** कहते हैं ।

कायिक प्रवर्धन के लाभ -

(क)फल का पेड़ जल्दी फलने लगता है ।

(ख)ऐसे पेड़ एक प्रकार के ही फल उत्पन्न करते हैं ।

(ग)पेड़ पर फल एक ही समय में पकते हैं ।

(घ)एक किस्म के पेड़ के सभी फल आकार,रूप रंग,स्वाद तथा सुगन्ध में एक होते हैं ।

(ङ)काँटे कम होते हैं ।

(च)कायिक प्रवर्धन वाले पौधे में मातृ पौधे के सभी गुण होते हैं ।

(छ)पेड़ छोटे तथा कम फैलने वाले होते हैं। जिससे कृषि क्रियाओं तथा उनकी देखभाल करने में आसानी होती है ।

(ज)ऐसे पौधों में अनेक लाभकारी गुणों का समावेश किया जा सकता है ।

(झ)कायिक प्रवर्धन से ऐसे पौधों की भी संख्या बढ़ाई जा सकती है जो बीज पैदा नहीं करते ।

कायिक प्रवर्धन की विधियाँ- 1. कलम लगाना2. दाब लगाना

1. कलम लगाना- कलम पौधे की शाखा या टहनी से काटी जाती है। टहनी की मोटाई पेन्सिल के बराबर होनी चाहिए साधारणत: कलम की लम्बाई 22 से 25 सेमी रखी जाती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि इस कलम में कम से कम 4-5 कलिकायें हों। कलम का ऊपरी भाग ऊपरी कलिका से लगभग 2 सेमी ऊपर उठकर तिरछा काटना चाहिए तथा नीचे के छोर को सबसे नीचे की कलिका से लगभग 2 सेमी नीचे हट कर समतल काटना चाहिए। कलम को जमीन में लगभग 45° का कोण बनाते हुए तिरछा लगाना चाहिए। कलम की कम से कम दो कलिकायें मिट्टी के भीतर रहनी चाहिए।कलम लगाने के तुरन्त बाद पानी देना चाहिए।सामान्यत:कलम बरसात में लगाई जाती है। ठंढे स्थानों में यह कार्य फरवरी में किया जाता है।कलमों में सबसे पहले पत्तियाँ निकलती है, जड़ें इसके बाद निकलती हैं। कलमों में पत्तियाँ निकलने के लगभग 30 से 45 दिनों बाद, जब इनमें पूरी तरह जड़ें निकल जायें तो इन्हें खोद कर स्थायी रूप से जहाँ लगाना हो,लगा देना चाहिए। गुलाब, क ट्रोटन, झाड़ीदार पौधे तथा अंगूर आदि इसी विधि से उगाये जाते हैं। कलमों के निचले भाग में सेरडिक्स पाउडर नामक हार्मोन लगाने से जड़ें शीघ्र निकलती हैं ।

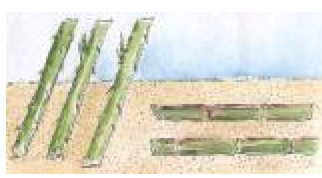

चित्र संख्या-6.1 कलम लगाना

2. दाब लगाना- सामान्य कलम लगाने में टहनी का जड़ निकलने से पहले मातृ पौधे से काट कर अलग करते हैं ।दाब कलम में टहनी मातृ पौधे से जुड़ी रहने देते हैं। टहनी को थोड़ा झुका कर जमीन की मिट्टी में दबा देते हैं। जब उसमें जड़ें आ जाती हैं और टहनी एक स्वतन्त्र पौधे का रूप ग्रहण कर लेती है,तब उसे मातृ पौधे से अलग कर के स्थाई जगह में लगाते हैं। इसकी दो विधियाँ है -

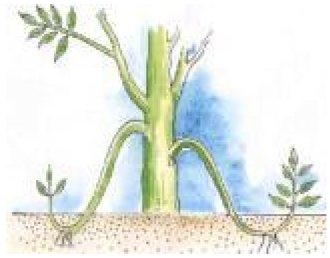

चित्र संख्या-6.2 दाब कलम

(क)साधारण दाब (ख)गूटी बाँधना

(क)साधारण दाब - शाखा झुकाकर जमीन या गमले में दबा देते हैं ।शाखा के जिस भाग को दबाते हैं, उस भाग के छिलके पर या तो चाकू से चीरा लगा देते है या हाथ से मसल कर छिलके को ढीला कर देते हैं ।इस स्थान पर भी सेरेडिक्स हार्मोन लगा देने से जड़ें शीघ्र निकलती हैं। जड़ें निकल आने के बाद दबी हुई टहनी को मातृ पौधे की ओर (3-5सेमी) से काट देते हैं। अब टहनी मातृ पौधे से पूरी तरह अलग हो जाती है। फिर इसे खोद कर स्थाई जगह पर लगा देते हैं। लगाने के तुरन्त बाद पानी देते हैं। बेला, चमेली, आदि का प्रवर्धन इसी विधि से किया जाता है ।

(अ)

(ब)

(स)

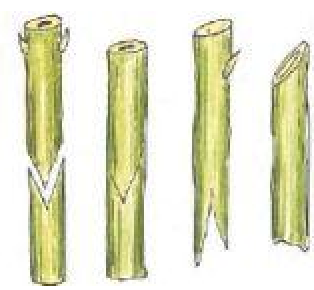

(द)

चित्र संख्या-6.3 (अ+ब)गूटी बाँधना (स) भेंट कलम (द) पैबन्द लगाना

(ख)गूटी बाँधना - इसके लिए लगभग एक वर्ष पुरानी शाखा को चुन कर गांठ के नीचे 3- 4 सेमी की लम्बाई में छिलका निकाल देते हैं।इसे छाल परिवर्तन कहते हैं। कटे भाग परमॉ घास को अच्छी तरह भिगो कर लपेट देते है । फिर उसके ऊपर पारदर्शी पॉलिथीन लपेट कर दोनों सिरों पर मजबूत धागा बांध देते हैं । 6 से 7 सप्ताह में जड़ें निकल आती हैं। जो पारदर्शी पॉलिथीन होने के कारण बाहर से दिखाई देती हैं। लगभग 40 से 45 दिन बाद गूटी को दाब कलम की भाँति काट कर मातृ पौधे से अलग कर देते हैं। फिर जहाँ आवश्यकता हो लगा देते हैं । गूटी बांधने से पहले हार्मोन का प्रयोग करने से जड़ें शीघ्र निकल आती हैं। इस विधि से दो से ढाई महीने में पौधे तैयार हो जाते हैं । लीची, नीबू तथा लतर वाले पौधे गूटी विधि से ही तैयार किये जाते हैं। इस विधि को वायवीय दाब या अण्टा बांधना भी कहते हैं ।

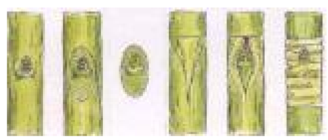

चित्र संख्या-6.4 चश्मा लगाना

विशेष - ऊतक संवर्द्धन (Tissue culture):- कायिक जनन की यह एक नयी विधि है । ऐसे पौधे जो नष्ट होने के कगार पर हैं या जिनके बीज आसानी से तैयार नहीं होते हैं या जिनकी जतियाँ दुर्लभ हैं या कुछ सजावटी पौधे जिन्हें आसानी से उगाया नहीं जा सकता, उन पौधों से थोड़ा सा ऊतक (कोशिकाओं का समूह) काटकर पोषक माध्यम (वैज्ञानिक विधि से तैयार रसायन मिश्रण) में उचित वातावरण में रख देते हैं । उचित वातावरण, ग्रीन हाउस में कृत्रिम ढंग से वर्ष के सभी महीनों में बनाये रखते हैं । ऊतक की कोशिकायें आनियमित विभाजन द्वारा कैलस (callus) का निर्माण करती हैं । पोषक माध्यम के अन्दर कुछ हार्मोन्स (वृद्धि हार्मोन्स) डाल दिये जाते हैं जिससे कैलस से प्ररोह (Shoot) तथा मूल (Root)तथा भ्रूण बनते हैं । इसे गमले या खेत में लगाकर वयस्क पौधे तैयार किये जाते हैं । आर्किड, सतावर तथा गुलदाउदी आदि के नवीन पौधे इस विधि द्वारा तैयार किये जाते हैं ।

नीबू की खेती

नीबू वर्ग के खट्टे फलों में नीबू का प्रमुख स्थान है। इसमें विटामिन सी औरअन्य पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। नीबू से अचार , कार्डियल, मार्मलेट और कैंडी भी तैयार की जाती है। नीबू की खेती का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके थोड़े बहुत फल साल भर मिलते रहते हैं।

मिट्टी

नीबू के पौधे लगाने के लिये ऐसी भूमि का चुनाव करना चाहिये जिसमें कम से कम 4-5 फिट की गहराई तथा पथरीली सतह न हो।और उसमें पानी के निकास की समुचित व्यवस्था हो। इसके लिये दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है।

उन्नत किस्में

उत्तर प्रदेश में नीबू की निम्न किस्में काफीअच्छी सिद्ध हुई हैं। यूरेका गोल, यूरेका लम्बा, पन्त लेमन-1, पन्त लेमन-2, बारह मासी लेमन, कागजी नींबू, इटालियन, बेदाना इत्यादि।

प्रवर्धन

नीबू वर्गीय फल वृक्षों को बीज द्वारा अथवा वनस्पतिक प्रवर्धन विधियों द्वारा लगाया जा सकता है। जैसे कलम बाँधना, दाब लगाना, गूटी, भेंट कलम और चश्मा चढ़ाना इत्यादि

बीज द्वारा

बीजों को बसन्त ऋतु में बोना अच्छा रहता है। यदि फलों से बीज तुरन्त न निकाला गया हो तो उन्हें 24 घंटे पानी में भिगोकर बोना चाहिये। बीजों को क्यारियों में 25 सेमी. की दूरी पर 2.5 सेमी गहराई पर बोना चाहिये। बोने के बाद बीजों को बालू से ढकने से मिट्टी में कड़ी पर्त नहीं बनने पाती।अंकुरण में बाधा नहीं पड़ती। बीज को भी थायराम से शोधित करना चाहिये। नर्सरी में पौध दो वर्ष तक रखी जाती है। जब पौधे उचितअकार के हो जायें तो उन पर चश्मा चढ़ाया जा सकता है।

वानस्पतिक भागों द्वारा

कलम

कलम के लिये स्वस्थ शाखा का चयन करना चाहिये। कलम का निचला हिस्सा गाँठ के नीचे से काटना चाहिये। कलम का 3/4 भाग भूमि में तथा 1/4 भाग बाहर रखना चाहिये। कलम लगाने का उपयुक्त समय मार्च-,अप्रैल व जून-जुलाई माह है।

गूठी बाँधना

लाइम व मीठे नीबू का प्रवर्धन इस विधि से किया जा सकता है। इसका उपयुक्त समय फरवरी-मार्च व जून-जुलाई है।

चश्मा चढ़ाना

यह इसके लिये सबसेअधिक प्रचलित विधि है। चश्मा चढ़ाने की काफी सफल विधि है। प्रवर्धन के लिये दो मूल वृन्तों पर कलिका चढ़ाने के समय कलिका के साथ लकड़ी का लगा रहना अधिक सफलदायक सिद्ध हुआ है। परन्तु परिपक्व डाली से लकड़ी रहित कलिका चढ़ाने पर 25अधिक सफलता मिलती है। इसका उचित समय मार्च-,अप्रैल,अगस्त-सितम्बर है।

पौध लगाना

कलम बाँधने के एक वर्ष बाद कलमी पौधे खेत में रोपण योग्य हो जाते हैं। इन पौधों को मिट्टी की पिण्डी के साथ खोद लेना चाहिये। समतल तैयार खेत में 6 से10 मीटर की दूरी पर 90 x90x 90 सेमी अकार के गड्ढे खोद लेना चाहिये। गड्ढों में पौधे लगाने के एक माह पूर्व ऊपर की मिट्टी में 50 किग्रा। गोबर की खाद 2 किग्रा। सुपर फॉस्फेट अौर 150 ग्राम एल्ड्रिन धूल मिलाकर भर देना चाहिये। गड्ढा भरते समय मिट्टी को दबाकर भूमि को धरातल से 15-20 सेमी उठा हुआ रखते हैं। इसका उपयुक्त समय जुलाई माह है। सिंचाई की सुविधा होने पर रोपण मार्च-,अप्रैल में किया जाता है। नीबू के बाग लगाने की वर्गाकार एवं आयताकार विधियाँ प्रचलित है।

थाला बनाना -

प्रत्येक पौधे के चारोंअोर थाला बनाना चाहिये। पौध बढ़ने पर हर साल उसी हिसाब से पौध की चौड़ाई में थालों का आकार भी बढ़ाते रहना चाहिए। इससे सिंचाई करने पर पानी सीधे तने के सम्पर्क में नहीं आता। समय-समय पर थालों की निराई-गुड़ाई करने पर खरपतवार नहीं पनप पाते।

खाद अौर उर्वरक

हर साल दिसम्बर में प्रत्येक पौधे के थाले में 20 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद डालना चाहिये। पौधे की उम्र के अनुसार निम्न मात्रा में उर्वरक देना चाहिए।
कम्पोस्ट या गोबर की खाद दिसम्बर-जनवरी के महीने में दी जाती है।यूरिया को 3 बराबर भाग में बाँटकर प्रथम भाग फरवरी, द्वितीय भाग जून अौर तीसरा भाग सितम्बर में (एक वर्ष में) देना चाहिये।

सिंचाई

जब मिट्टी सूखने लगे सिंचाई कर देना चाहिये।आवश्यकता से अधिक पानी को क्यारी से बाहर निकाल देना चाहिये।

छँटाई

रोगी व घनी शाखाओं को काटते रहना चाहिये। जब पौधा 3-4 वर्ष का हो जाय तो कटाई-छँटाई कर देना चाहिये।

फलों की तुड़ाई -

नीबू का पौधा साल भर फल देता रहता है। पूर्ण रूप से पके हुये फलों को तोड़ना चाहिये।

उपज

पकने पर फलों का रंग पीला पड़ने लगता है। एक वर्ष में प्रति पौधा 400-600 फल मिलते हैं।अौसतन 200-250 क्विंटल/ हेक्टेयर उपज मिलती है।

फसल सुरक्षा

कीट नियन्त्रण

पत्तियों पर छेद करने वाली सूँड़ी

इस कीट की तितली छोटी चमकदार होती है। मादा तितली प्रायः पत्तियों की निचली सतह पर और कभी-कभी टहनियों पर एक-एक करके अण्डे देती हैं। इन अण्डों से 2 से 10 दिन के भीतर सूँडियाँ निकलती हैंअौर पत्तियों की निचली सतह पर छेद बनाकर खाती रहती हैं।

रोकथाम

सूँड़ी लगी हुई पत्तियों को तोड़कर जला देना चाहिये। 0.2 इन्डोसल्फान 35 ई.सी. का छिड़काव करना चाहिये।

सफेद मक्खी

मक्खी 1 मिमी. लम्बीअौर कोमल होती है। रँग पीला,अँखें लाल, पंख चमकदार तथा उन पर सफेद पाउडर सा फैला रहता है।

रोकथाम

कीट लगी हुई पत्तियों को तोड़कर जला देते हैं। 0,2 इन्डोसल्फान 3.5 ईसी का छिड़काव करते हैं।

छिलका खाने वाली सूँड़ी

सूडियाँ प्रारम्भ में तने की छाल खुरचती हैं अौर तने में घुसकर खाती हैं।

रोकथाम

पेट्रोल या इन्डोसल्फान दवा में रूई भिगोकर छेद के भीतर डाल देते हैं।

रोग नियन्त्रण

सिट्रस कैंकर

इससे पत्तियाँ, टहनियाँ, काँटे तथा फल प्रभावित होते हैं। पहले हल्का पीला दाग बाद में भूरा अौर बनावट में फल खुरदरा हो जाता है। यह नर्सरी में एवं बड़े पेड़ों में लगता है।

रोकथाम

वर्षा के पहले ब्लाइराक्स 50 का 0.3 का घोल 15-20 दिन के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिये।

गमोसिस -

प्रभावित पेड़ों में मुख्य तने के निचले भागअौर कभी-कभी प्रमुख जड़ों से गोंद जैसा पदार्थ निकलने लगता है। पेड़ बहुत कमजोर हो जाता है।

रोकथाम

मुख्य तने पर नीचे की तरफ बोर्डो लेप लगाते हैं।

पपीता की खेती

पपीता एक वर्ष बाद फल देने लगता है अौर तीन वर्ष तक अच्छी फसल देता है। यह आम आदि के छोटे बागों के बीच-बीच में उगाया जा सकता है। यह विटामिन ए, बी, सी व कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवणों का अच्छा स्त्रोत है। दूध से निकाला गया पदार्थ पपेन माँस गलाने के काम में आता है।

मिट्टी

बलुई दोमट या दोमट भूमि इसके लिये उपयुक्त होती है। इस फसल के लिये सिंचाई व पानी के निकास की अच्छी सुविधा होनी चाहिये।

प्रवर्धन

यह मुख्यतः बीज द्वारा तैयार किया जाता है। पौध तैयार करने के लिये 10-15 सेमी। ऊँचीअ ौर 1.5 मीर चौड़ी क्यारियाँ बनानी चाहिये। लम्बाई आवश्यकतानुसार रखी जा सकती है। रोपाई के 2 माह पूर्व बोआई कर देना चाहिये। बीजों को थीरम (2 ग्राम दवा प्रति किग्रा बीज) से शोधित कर देना चाहिये। 15 सेमी की दूरी या पंक्तियाँ बनाकर 1.5 सेमी की गहराई पर बीजों की बुआई करते हैं। 400 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। 10 दिन बाद बीजों का अंकुरण प्रारम्भ हो जाता है। जब पौधे 8-10 सेमी। के हो जायें तो उन्हें 0.5 किग्रा। क्षमता वाले छेद किये हुये पोलीथीन के थैलों में खाद व मिट्टी का मिश्रण मिलाकर लगा दें।

रोपाई का समय

वर्षा ऋतु के आरम्भ में - जून-जुलाई।

वर्षा ऋतु के अन्त में - सितम्बर-,अक्टूबर।

बसन्त ऋतु - फरवरी-मार्च।

पपीता की जून-जुलाई में रोपाई करना सर्वोत्तम है।

रोपाई का तरीका

50 x 50 x 50 सेमी।आकार के गड्ढे 2 x 2 मीटर की दूरी पर जून में खोद लेना चाहिये। प्रत्येक गड्ढे में 20 किग्रा। गोबर की खाद 1.25 किग्रा एवं हड्डी का चूरा समान मात्रा में मिट्टी में मिलाना चाहिये। रोपने के लिये 20-25 सेमी. ऊँचे पौधे होना चाहिये। हर गड्ढे में 30 सेमी. की दूरी पर 2 पौधे लगाना चाहिये।

खाद तथा उर्वरक -

प्रति वर्ष प्रति पेड़ 2 टोकरी गोबर की खाद तथा 250 ग्राम नत्रजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस तथा 500 ग्राम पोटाश को 2 महीने के अन्तर पर 6 बार में देना उत्तम रहता है।

उन्नत किस्में -

कोयम्बटूर - 1, कोयम्बटूर - 2, वाशिंगटन, कुर्ग हनीड्यू, पूसा जाइण्ट, पूसा ड्वार्फ, पूसा डेलीसस।

सिंचाई

सर्दियों में 10-15 दिन बाद गर्मियों में 6-7 दिन बाद सिंचाई करना चाहिये।

निराई-गुड़ाई

उत्तम फसल लेने के लिये निराई-गुड़ाई करके क्यारियों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिये।

फलों की तुड़ाई

फलों पर पीलापन आने के बाद उन्हें तोड़ना चाहिये। फलों को कृत्रिम रूप से पकाने के लिये फलों को बोरों में या कागज में लपेट कर रखने से 3-4 दिन में फल पक जाते हैं।

पैदावार

एक पौधे से 25-100 तक फल प्राप्त होते हैं। एक हेक्टेयर में 250 से 350 क्विंटल पैदावार प्राप्त होती है।

फसल सुरक्षा

रोग नियन्त्रण

लीफ कर्ल

इसको पर्ण कुन्चन या मोजैक रोग भी कहते हैं। पत्तियाँ छोटी झुर्रीदार व विकृत हो जाती हैं। इसमें पौधे की पत्तियाँ, चितकबरी वअकार में छोटी तथा उस पर हरे रंग के फफोले पड़ जाते हैं।

रोकथाम

पौधों पर 0.15 साइपरमेथ्रिन के घोल का 10-15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिये।

रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिये।

तना तथा जड़ विगलन

स्तम्भ आधार पर सड़ने के कारण पौधा मुरझा जाता है। पपीते की पौध का अर्द्रविगलन (डैम्पिंग आफॅ) भी मुख्यतः इस रोग के कवक द्वारा ही होता है।

रोकथाम

रोगी पौधों को उखाड़कर जलाना या जमीन में दबाना चाहिये।

क्यारियों की मिट्टी में केप्टान 0.2 घोल बीज के अंकुरण से पूर्व व अंकुरण के समय डालना चाहिये। बीज को 2 ग्राम थायराम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिये।

कीट नियन्त्रण

रेड स्पाइडर माइट

इस कीट का आक्रमण पत्तियों व फलों पर होता है। यह कीट पत्तियों का रस चूसता है। पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।

रोकथाम

प्रभावित पौधों पर साइपरमेथ्रिन 0.15 का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये।

लीची की खेती

लीची का फल प्रकृति में ठण्डा व तर होता है। लीची का फल सेवन करने से हृदय तथा मस्तिष्क को बल मिलता है। यह प्यास को भी शान्त करता है। भारी होने के कारण एक साथ इसेअधिक नहीं खाना चाहिये। इसके ताजे फल खाये जाते हैं। फल मई से जुलाई तक मिलते हैं।

इसकी खेती उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले में की जाती है। इसके फल ग्रीष्म ऋतु में पौधों में लदे रहते हैं।

भूमि

पर्याप्त गहराई की भूमि जिसमें जल निकास का उत्तम प्रबन्ध हो, उपयुक्त होती है। इसके लिये मृत्तिका दोमट भूमि सर्वोत्तम है। दोमट भूमि में भीअच्छी उपज मिलती है। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होना चाहिये।

प्रवर्धन

1. बीज बोकर, 2.दाब कलम लगाकर, 3. भेंट कलम लगाकर, 4. मुकुलन द्वारा, 5. गूटी द्वारा

इन विधियों में गूटी लगाना सर्वोत्तम विधि है। बीज द्वारा बोकर उगाये गये पौधों में फल देर से मिलते हैं।

गूटी बरसात के आरम्भ (जून) में तैयार की जाती है। उचित मोटाई की शाखा लेकर इसके निचले भाग से लगभग 2.5 सेमी लम्बाई में छिलका हटा देते हैं फिर इसे नम मॉस-घास से ढककर ऊपर से कसकर बाँध देते हैं। इससे श्वसन की क्रिया जारी रहती है पर वाष्पीकरण रूक जाता है।

2 माह बाद जड़ें पूर्ण रूप से निकलने के बाद शाखा को पेड़ से काटकरअलग कर लेते हैं अौर छायादार स्थान में गमले में लगाकर रख देते हैं। इन पर से कुछ पत्तियों को तोड़ देने से इनके मरने का अन्देशा कम हो जाता है। एक साल बाद ये लगाने योग्य हो जाते हैं। गूटी जुलाई में बाँधी जाती हैअौर सितम्बर में काटकर गमले में लगाकर नर्सरी में रख दिया जाता है।

पौधे रोपने का समय अौर ढँग

लीची के पौधे वर्षा ऋतु में खेत में रोपे जाते हैं। सिंचाई की सुविधा होने पर फरवरी-मार्च में भी खेत में रोपा जा सकता है।

लीची के पौधे रोपने के लिएअप्रैल-मई में खेत में 10 -10 मीटर की दूरी पर 1 मीटर व्यास से 1 मीटर गहरे गड्ढे खोद लेना चाहिये अौर इन्हें जून तक खुला रखना चाहिये। मिट्टी अौर गड्ढे धूप में भली प्रकार तप जाते हैं। वर्षा होने के उपरान्त जुलाई के प्रारम्भ में इन गड्ढों में 15 किग्रा गोबर की खाद, 2 किग्रा। चूना, 250 ग्राम एल्ड्रिन चूर्ण, 10 किग्रा. लीची के बाग की मिट्टी में मिलाकर गड्ढों में भर देते हैं।अगस्त में इन गड्ढों के बीचोबीच पौधा रोपकर उनके चारों तरफ थाला बना देना चाहिये।

खाद अौर उर्वरक

लीची के उत्पादन के लिये खादअौर उर्वरक का बहुत महत्व है इसका प्रयोग निम्न प्रकार करना चाहिये।

पेड़ की गोबर की खाद नाइट्रोजन फास्फोरस पो>ाश

उम्र (वर्ष में) (किग्रा. प्रति पेड़) (ग्रा. प्रति पेड़) (ग्रा. प्रति पेड़) (ग्रा.प्रति पेड़)
गोबर की खाद, फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा दिसम्बर के अन्त में देनी चाहिये। नाइट्रोजन की 1/2 मात्रा फरवरी में तथा 1/2 मात्रा अप्रैल में देनी चाहिये। इसके अलावा 2.5 किग्रा जिंक सल्फेट के साथ 1.2 किग्रा। बुझा चूना, 450 ली पानी में घोलकर पौधों में छिड़काव करना चाहिये।

उन्नत किस्में

अगेती जातियाँ

देहरादून, रोज सेन्टेड,अर्ली लार्ज रेड।

मध्यम प्रजातियाँ

शाही, गुलाब, चायना, सहारनपुर प्याजी।

पछेती

गोला, कलकतिया, रामनगर, लेट सीडलेस, इलायची।

रोग नियन्त्रण

चूर्णी फफूॅंदी

इस रोग का प्रकोप होने पर फूलों तथा नई पत्तियों पर फफूॅंदी की सफेद धूल दिखायी देती है। इसकी रोकथाम के लिये केराथेन का 0.06 घोल छिड़कना चाहिये।

सिंचाई तथा जल निकास

पौधों में फूलअने से पूर्व अौर उसके बाद फल लगने तक 2-3 सिचाइयाँ करनी चाहिये। दिसम्बर से मई तक इसमें सिंचाई करना है।

निराई-गुड़ाई

इसमें सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करना चाहिये। खेत को खरपतवार से मुक्त करना चाहिये।

काट-छाँट

पौधों के बड़ा हो जाने पर उनमें कटाई-छंटाई करना आवश्यक नहीं होता। इसलिये प्रारम्भ में काट-छाँट करना चाहिये।

फल तोड़ना

फलों के साथ 20-25 सेमी। की टहनियाँ भी तोड़ ली जाती हैं।

उपज

100 से 200 वि<वं>ल/हेव<>ेयर।

कीट नियन्त्रण

माइट

यह पत्तियों के निचले भाग से रस चूसता है। पत्तियाँ सिकुड़ कर गिर जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिये फेनकिल नामक दवा का 0.15 घोल का छिड़काव करना चाहिये।

मिली बग

यह फूल तथा नये कल्लों का रस चूसता है। इसकी रोकथाम के लिये अोस्टीको पेस्ट की पट्टी बाँध देनी चाहिये।

वृक्षारोपण

वृक्षारोपण के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाये जाते हैं ।फलों के अतिरिक्त हम कुछ विशेष स्थानों पर कुछ विशेष प्रकार के वृक्ष लगाते हैं जो हमारे लिए अनेक प्रकार से उपयोगी सिद्ध होते हैं। हमें वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करने हेतु वनमहोत्सव जैसे कार्यक्रम में विशेष रुचि लेनी चाहिए। इस प्रकार के कार्यक्रम आयोजित कर वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किया जाना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि वृक्ष हमारे जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक बहुत सी वस्तुएं प्रदान करते हैं जो निम्नवत हैं-

1.वृक्ष हमें फल देते हैं।

2.इमारती लकड़ी, फर्नीचर की लकड़ी तथा ईंधन के लिए लकड़ी देते हैं।

3.वातावरण को हरा-भरा तथा पर्यावरण को शुद्ध बनाये रखते हैं। वृक्ष छाया देते हैं।

4.वृक्षों तथा पौधों पर खिले सुन्दर फूल आस-पास के वातावरण को मनोरम बनाते हैं।

5.वृक्ष, वर्षा में सहायक होते हैं।

6.वृक्ष, बाढ़ की रोक-थाम करते हैं तथा भूमि कटाव भी रोकते हैं।

7.वृक्ष, प्राण वायु (आक्सीजन) उपलब्ध कराते हैं।

आवासीय भवनों के पास- नीम, अमलतास,गुलमोहर, अशोक, कदम्ब, कचनार, सीता अशोक, मौलश्री आदि लगाये जाते हैं।

सार्वजनिक स्थानों जैसे विद्यालय,अस्पताल,पंचायत घर के आस पास- नीम,अमलतास, गुलमोहर, युकेलिप्टस, अशोक, सीता अशोक, बरगद, पीपल, कदम्ब,कटहल, आम, कचनार,सहजन, शहतूत आदि लगाये जाते हैं।

मन्दिरों तथा अन्य पूजा स्थलों के पास- केला,नीम, पीपल, बरगद,पाकड़, कदम्ब, अमलतास, अशोक, सीता अशोक, कनेर, गुड़हल,चाँदनी , बेल आदि लगाये जाते हैं।

इस प्रकार विभिन्न पेड़ों को लगाना **वृक्षारोपण** कहलाता है।इसके अतिरिक्त ऊसर एवं बंजर भूमि में जंगली सूबबूल, देशी बबूल,बेर,झरबेरी एवं कुछ आँवले की प्रजातियों का वृक्षारोपण किया जाता है।जिससे इसकी पत्तियों के गिरने एवं सड़ने से भूमि में सुधार होता है तथा **मृदा कटाव** भी रुकता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगाइये -

i)वाटिका में -

क)केवल फूलों के पौधे लगाये जाते हैं।

ख)केवल फलों के पौधे लगाये जाते हैं ।

ख)केवल सब्जियों के पौधे लगाये जाते हैं।

घ)फूल और सब्जियों दोनों के पौधे लगाये जाते हैं।

2. निम्नलिखित वाक्यों के बाद दिये गये कोष्ठक में सही (✓) या गलत (X) का निशान लगाइये-

i)) वाटिकामें पेड़-पौधे सघन लगाने चाहिए। ( )

ii) लीची उष्ण प्रदेशीय फल है। ( )

iii)कलम बीज द्वारा लगाई जाती है ( )

3.i)वाटिका अविन्यास में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए

ii) मौसमी फूल कितने प्रकार के होते है

iii)लीची की प्रजातियाँ लिखिए

iv)नीबू का प्रवर्धन कैसे किया जाता है

4. लीची की खेती का वर्णन कीजिए।

5.नीबू के प्रवर्धन की विधियों का सचित्र वर्णन कीजिए ।

6.प्रवर्धन किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार का होता है?

7.बीज प्रवर्धन और कायिक प्रवर्धन में अन्तर बताइए।

8.कायिक प्रवर्धन से क्या लाभ होते हैं ?

9.वाटिका अभिविन्यास से आप क्या समझते हैं ?

10.नाशपाती की उन्नतिशील खेती का वर्णन कीजिए।

11.कलम लगाना एवं दाब लगाना में क्या अन्तर है ? स्पष्ट कीजिए।

प्रोजेक्ट कार्य

विद्यालय के प्रांगण में सहपठियों की सहायता से वृक्षारोपण कार्यक्रम का अयोजन कीजिए। इसकी सफलता संबंधी रिपोर्ट तैयार कीजिए।

back

इकाई - 7 फल परिरक्षण

HUI2HS

- फल तथा फल पदार्थो के खराब होने के कारण
- बोतल तथा डिब्बों को जीवाणु रहित बनाना तथा उनके मुँह बन्द करना
- रासायनिक परिरक्षकों का प्रयोग करना
- नीबू का स्कवैश बनाना
- फलों का मुरब्बा एवं टमाटर का सॉस तैयार करना

फल परिरक्षण- फल तथा सब्जियों का रक्षात्मक आहार के रूप में विशेष महत्त्व है। इसे हम **संरक्षात्मक खाद्य** के नाम से भी जानते हैं। फलों तथा सब्जियों में जल की अधिक मात्रा होने के कारण इन्हें ताजा रूप में अधिक दिनों तक नहीं रखा जा सकता है। इनसे कोई उत्पाद जैसे- अचार,मुरब्बा,जैम,जेली, मार्मलेड, सॉस, केचप, फल रस, आदि बनाकर अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। फल तथा सब्जियों से विभिन्न उत्पाद बनाकर अधिक दिनों तक सुरक्षित रखने की विधि को `**फल परिरक्षण'** कहते हैं।

फल तथा फल पदार्थ खराब होने के कारण

रोटी,अचार,मुरब्बा में कुछ दिन बाद या वर्षा ऋतु में रूई के फाहे जैसी सफेद,भूरी,नीली,काले रंग की संरचना दिखाई देती है जिसके कारण इसका स्वाद खराब हो जाता है। यदि हमें इनके खराब होने के कारण के बारे में जानकारी हो जाय तो इससे बचाव किया जा सकता है। फल तथा फल से बने उत्पाद के खराब होने के मुख्य कारक हैं- कवक या फंफूद,खमीर, जीवाणु (बैक्टीरिया)एवं एंजाइम ।

कवक या फंफूद- फल,सब्जी, डबलरोटी, मुरब्बा,अचार आदि में वर्षा के दिनों में काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।इसके अलावा सफेद भूरे रूई के फाहे जैसी संरचना देखने में आती है। इसी को `**कवक'** के नाम से जानते हैं।ये कवक फल तथा इनसे बने उत्पाद को खराब कर देते हैं। इससे फल तथा फल पदार्थो का रंग भी बदल जाता है।फंफूद के बीजाणु हवा में फैले रहते हैं जिससे हर खाद्य पदार्थ पर यह आसानी से पहुँच जाता है । यदि किसी पदार्थ के थोड़े से हिस्से में फंफूद लग गया हो तो उसे निकाल कर ठीक किया जा सकता है। लेकिन फंफूद का पूरा प्रभाव हो जाने पर फल तथा फल पदार्थ पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं

।अचार,मुरब्बा,को कभी-कभी धूप में रखने से बचाव किया जा सकता है। यदि निर्मित पदार्थ को 30 मिनट तक 71◦C ताप पर गर्म किया जाय तो इन्हें नष्ट किया जा सकता है ।

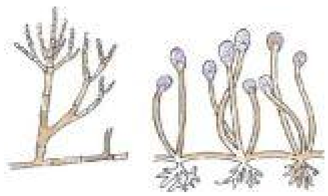

चित्र संख्या-7.1 विभिन्न प्रकार के फंफूद

खमीर (Yeast) यह भी फंफूद की श्रेणी में आता है जो एक कोशिका वाला सूक्ष्म जीव है। इसकी कोशिकायें अण्डाकार या गोलाकार होती हैं। खमीर के कारण फल एवं खाद्य पदार्थो का स्वाद तथा रंग बदल जाता है। खमीर मीठी चीजों पर बड़ी आसानी से लग जाती है लेकिन जिन चीजों में चीनी की मात्रा 68प्रतिशत से अधिक होती है उनमें खमीर का प्रभाव नहीं होता है। खमीर की वृद्धि के लिए आक्सीजन तथा जल आवश्यक है। खमीर को आधे घण्टे तक 71.4◦C पर गर्म करके नष्ट किया जा सकता है । इसका प्रभाव पेय पदार्थो पर अधिक होता है ।

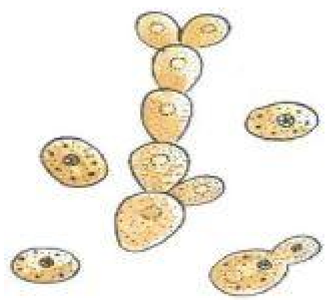

चित्र संख्या-7.2 खमीर

एंजाइम(Enzymes)द्वारा- फलों तथा उनसे निर्मित पदार्थो के खराब होने में एन्जाइम की अहम भूमिका होती है। एंजाइम जटिल रचना वाले जैविक उत्प्रेरक होते हैं और प्रत्येक जीवित वस्तु में उपस्थित रहते हैं। फलों में रंग परिवर्तन एंजाइम के कारण ही होता है । यदि आम के फलों को तोड़कर कुछ समय के लिए रख दिया जाय तो वे पक जाते हैं। उनका रंग गहरा पीला तथा भूरा पड़ जाता है। यदि आप सेब को चाकू से काटकर थोड़ी देर रख दें तो उसका रंग भूरा पड़ जाता है ।ऐसा एंजाइम के कारण होता है। एंजाइम के इस रंग परिवर्तन की क्रिया के साथ-साथ ही फल तथा फल पदार्थो के स्वाद एवं सुगन्ध आदि में भी अन्तर आ जाता है और धीरे-धीरे ये नष्ट होने लगते हैं। यदि इन्हें 70◦-80◦से. पर 20-30 मिनट तक रखा जाय तो एंजाइम निष्क्रिय हो जाते हैं।

बैक्टीरिया (Bacteria)द्वारा- बैक्टीरिया एक कोशिका वाले अत्यन्त छोटे जीव होते हैं जिन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखा जा सकता है। इनका जनन बहुत तेजी से कोशिका विभाजन के द्वारा होता है। ये कई आकार के होते हैं। अधिकाँश जीवाणु क्लोरोफिल रहित होते हैं। अत: इन्हें अपना जीवन-यापन अन्य पदार्थो पर करना पड़ता है। यही कारण है कि फल तथा फल पदार्थो पर इन जीवाणुओं का आक्रमण हो जाने के कुछ समय बाद वे सड़ने लगते हैं । अधिकाँश जीवणुओं को 100° से. ताप पर अम्लीय माध्यम में 30 मिनट तक गर्म करके नष्ट किया जा सकता है। ठण्डक से जीवाणु नष्ट नहीं होते बल्कि इससे उनकी बढ़ोत्तरी में रूकावट हो जाती है ।बर्फ में जमाये गये पदार्थों में भी जीवाणु मौजूद रहते हैं लेकिन ये प्रसुप्ता अवस्था में रहते हैं जिसके फलस्वरूप फल पदार्थ खराब नहीं होते।

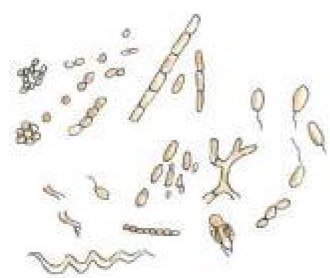

चित्र संख्या-7.3 बैक्टीरिया

बोतल तथा डिब्बों को जीवाणु रहित करना तथा उनके मुँह बन्द करना- फल तथा उनसे निर्मित पदार्थो को खराब होने से बचाने के लिए इन्हें बोतल एवं डिब्बों में बन्द करके रखा जाता है। इन फल एवं फल पदार्थो को बोतल एवं डिब्बों में रखने से पूर्व इन्हें जीवाणु रहित करना आनिवार्य है। इनमें निम्नलिखित क्रियायें की जाती हैं-

1. निर्जीवीकरण - डिब्बों तथा फलों को उबलते हुए पानी में 10 मिनट तक गर्म किया जाता है। इससे इनके अन्दर तथा बाहर के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।

2. बोतल तथा डिब्बों को वायु रहित करना- डिब्बों तथा बोतलों को बन्द करने से पहले उन्हें वायु रहित करना आवश्यक है। वायु रहित करने के लिए उन्हें गर्म पानी के भगौने में इस प्रकार रखते हैं कि इनका चौथाई भाग गर्म पानी में डूबा रहे। इस गर्म पानी में इसको इतना गर्म करते हैं कि इनके बीच का तापक्रम 80°-85° से.हो जाय। यह तापक्रम खौलते पानी में लगभग 10 मिनट में आ जाता है। वायु रहित कर लेने के बाद डिब्बों तथा बोतलों को तुरन्त मशीन द्वारा बन्द कर देना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए की बन्द करते समय डिब्बे का तापक्रम कम से कम 70° से. होना चाहिए।

रासायनिक परिरक्षकों का प्रयोग करना- फलों और सब्जियों से निर्मित पदार्थो को कवक,फंफूद,एंजाइम एवं जीवाणु आदि के प्रभाव से बचाने के लिए निम्नलिखित

परिरक्षक उपयोग में लाये जाते हैं।

1.पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट

2.सोडियम बेन्ज़ोएट

3.सोडियम मेटाबाईसल्फ़ेट

1. पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट- इसको संक्षेप में (के एम एस) के नाम से जाना जाता है। यह एक रवेदार गन्धक लवण है। यह अम्लीय और क्षारीय माध्यम से प्रभावित नहीं होता है।फलों के रस में उपस्थित सिट्रिक अम्ल के प्रभाव से पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट,सल्फर डाईऑक्साइड और पोटैशियम साइट्रेट के रूप में परिवर्तित हो जाता है। सल्फर डाई ऑक्साइड पानी से मिलकर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है जो परिरक्षक का कार्य करती है ।

2. सोडियम बेन्ज़ोएट - सोडियम बेन्ज़ोएट एक स्वाद और गन्ध रहित चूर्ण होता है। इसकी परिरक्षण क्षमता इसमें उपस्थित बेन्जोइक अम्ल के कारण होती है ।सोडियम बेन्ज़ोएट की जल में घुलनशीलता, बेन्जोइक अम्ल की अपेक्षा कई गुना अधिक होती है इसलिए सोडियम बेन्ज़ोएट का प्रयोग अधिक किया जाता है । यह मुख्यत: फंफूद और खमीर की वृद्धि को रोकता है। बेन्जोइक अम्ल सूक्ष्म जीवों की श्वसन क्रिया पर प्रभाव डालती है जिसके परिणाम स्वरूप ग्लूकोस का आक्सीकरण रुक जाता है । बेन्जोइक अम्ल के फलस्वरूप सूक्ष्म जीवों में आक्सीजन का उपयोग अधिक हो जाता है। सोडियम बेन्ज़ोएट फलों के रस की ऊपरी सतह पर होने वाली खरबियों को रोकने में सक्षम होता है ।

3- सोडियम मेटाबाईसल्फ़ेट- यह रवेदार होता है एवं इसके रवे छोटे होते हैं। 10किग्रा शर्बत में इसकी 5ग्राम मात्रा मिलायी जाती है। पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट की तरह ही इसका प्रयोग रंगीन शर्बतों में नहीं करते हैं क्योंकि यह शर्बत को रंगहीन कर देता है। इस परिरक्षक का प्रयोग प्राय: कम किया जाता है।

नीबू का स्कवैश बनाना

गर्मी के दिनों में पेय पदार्थ के रूप में हम स्कवैश का उपयोग करते हैं।यह सन्तरा और नीबू,आम,ग्रेफ्रूट जामुन,बेल,लीची,फालसा,तरबूज इत्यदि फलों से तैयार किया जाता है। गर्मी में इसके सेवन से मन प्रसन्न हो जाता है। स्कवैश निम्नलिखित प्रकार से बनाया जाता है-

फलों का चुनाव करना- नीबू का स्कवैश बनाने के लिए ताजे फल लेने चाहिए। फल छाँने के बाद उन्हें ताजे पानी से धोना चाहिए। फल अच्छी तरह पके हों। कच्चे, फंफूद ग्रस्त या सड़े-गले फल नहीं लेने चाहिए।

रस निकालना- नीबू का स्कवैश बनाने के लिए इनके छिलके उतार लेना चाहिए। इसके बाद जूस निकालने वाले जूसर से जूस निकालना चाहिए और स्टेनलेस स्टील की छलनी से छान लेना चाहिए ।

प्रयुक्त होने वाली सामग्री-नीबू का रस - 1 लीटर

पानी - 2 लीटर

चीनी- 2 किग्रा

सिट्रिक अम्ल - आवश्यकता पड़ने पर (10ग्राम)

पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट- 3 ग्राम

बनाने की विधि- सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के एक बड़े भगौने में 1लीटर पानी डालते हैं फिर उसमें चीनी डाल कर चूल्हे, या स्टोव पर गर्म करते हैं। बीच-बीच में रस को चलाते रहते हैं। एक उबाल आने के पश्चात जूस को चूल्हे से उतार लेते हैं। चाशनी ठण्डी होने पर नीबू का रस तथा पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट को मिला दिया जाता है। परिरक्षक पहले थोड़े पानी में घोल लेते हैं तब जूस में मिलाते हैं। अब स्कवैश तैयार हो गया। इसके बाद इसे बोतल या जार में ऊपर से 3 सेमी जगह छोड़कर भरते हैं। उपरोक्त सामग्री से 750 मिली स्कवैश तैयार हो जाता है तत्पश्चात इसे बोतलों में ढक्कन लगाकर सील कर देते हैं।

फलों का मुरब्बा बनाना

मुरब्बा बनाने के लिए फल को समूचा या बड़े-बड़े टुकड़ों में काटकर चीनी के गाढ़ो घोल में इतना पकाया जाता है कि उसमें कम से कम 70 प्रतिशत चीनी की मात्रा समान रूप से समा जाय। आम,आँवला,सेब,बेल तथा करौंदा आदि फलों से मुरब्बा तैयार किया जाता है।

मुरब्बा बनाने की विधियाँ- मुरब्बा बनाने से पहले निम्नलिखित क्रियाएं क्रमवार करते हैं -

1. फलों का चुनाव 2. फलों को तैयार करना 3. फलों को गोदना 4. फलों को नमक चूने अथवा फिटकरी के घोल में भिगोना, 5. ब्लन्चिंग 6. चाशनी तैयार करना 7. फलों को चाशनी में डालना

1. फलों का चुनाव - मुरब्बा बनाने के लिए बेल को छोड़कर ठीक तरह से पके हुये फल ही प्रयोग में लाने चाहिए ।

2. फलों को तैयार करना- फलों को छाँटने के बाद साफ पानी में अच्छी प्रकार धो लेना चाहिए ।

3. फलों को गोदना- मुरब्बा बनाने में फलों को गोदना एक महत्वपूर्ण क्रिया होती है। धोने के बाद फलों की गोदाई करते हैं जिससे फलों के अन्दर चीनी की चाशनी पूरी तरह मिल सके। यदि फलों की गोदाई अच्छी प्रकार नहीं होगी तो मुरब्बा ठीक नहीं बनेगा ।

4. फलों को नमक,चूने अथवा फिटकरी के घोल में भिगोना- फलों को अच्छी प्रकार से गोदने के बाद 2 प्रतिशत नमक,चूने अथवा फिटकरी के घोल में कुछ समय के लिए रखा जाता है। ऐसा करने से फलों का खट्टापन या कसैलापन काफी कम हो जाता है। नमक के घोल में कड़े फल मुलायम हो जाते हैं और चूने तथा फिटकरी के घोल में मुलायम फल कड़े हो जाते हैं।

5. ब्लन्चिंग- निर्धारित समय तक फलों को उपर्युक्त घोल में भिगाने के बाद साफ पानी से धो लिया जाता है। इसके बाद फलों को किसी साफ कपड़े में रखकर 5-15 मिनट तक उबलते हुये पानी में डुबोया जाता है ।

6. चाशनी तैयार करना - आवश्यक चीनी की मात्रा तथा पानी को स्टेनलेस स्टील या एल्युमीनियम के भगोने में उबाला जाता है पानी में उबाल आने के बाद चीनी मिलानी चाहिए। जैसे ही दूसरा उबाल आ जाय,साइट्रिक अम्ल डालकर चाशनी को साफ कर लेना चाहिए ।

7. फलों को चाशनी में डालना- जब चाशनी तैयार हो जाती है तब फलों को उसमें डाल देते हैं तथा उतारकर नीचे रख लेते हैं जिससे फल चाशनी को सोख ले।यदि चाशनी गाढ़ी नहीं हुयी है तो फलों को पुन: उबालते हैं,इससे उसमें चीनी की मात्रा 70 प्रतिशत से अधिक हो जाती है। अब इसे साफ, सूखे तथा चौड़े मुँह वाले काचँ के जार में भर कर रख दिया जाता है। यहाँ पर हम लोग आँवले का मुरब्बा बनाने के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे ।

आँवले का मुरब्बा बनाना- आँवले का मुरब्बा बनाने के लिए प्राय: बड़े किस्म वाले आँवले की प्रजति का चुनाव किया जाता हैं,क्योंकि बड़े आँवले में रेशे कम होते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम आँवले के फलों को अच्छी तरह धोकर उनको स्टेनलेस स्टील के काँटों या लकड़ी के काँटों द्वारा अच्छी तरह गोदा जाता है। तत्पश्चात 2 प्रतिशत फिटकरी का घोल बनाकर उबाल लेते हैं एवं इस उबलते हुए घोल में आँवले को 5-10 मिनट तक पका लेते हैं। इसके बाद एक किग्रा आँवले के लिए डेढ़ा किग्रा की दर से चीनी लेते हैं। एक भगोने में पहले चीनी की तह बिछाते हैं और इसके ऊपर एक तह आँवले की लगा दी जाती है। इस प्रकार आवश्यकतानुसार फल तथा चीनी की तह लगाते हैं। आँवले को चीनी की तहों के बीच चौबीस घण्टों तक रख देते हैं।

दूसरे दिन अधिकांश चीनी पिघल जायेगी। अब आँवले को चीनी के घोल से निकाल कर घोल की चाशनी तैयार कर लेते हैं। इस चाशनी में आँवले को चौबीस घण्टों तक के लिए छोड़ दिया जाता है। तीसरे दिन फिर आँवले को निकालकर चाशनी को इतना पकाते हैं कि

उसमें चीनी की मात्रा 70 प्रतिशत हो जाय। ऐसी अवस्था में आँवले को गरम चाशनी में डाल देते हैं। लगभग 20-19 दिन में मुरब्बा खाने के योग्य हो जाता है।

गाजर का मुरब्बा बनाना- गाजर का मुरब्बा बनाने के लिए अच्छी,दाग रहित, नारंगी रंग की गाजरों का चुनाव किया जाता है। उनकी पेंदी काट दी जाती है, फिर खौलते पानी में थोड़ी देर के लिए डाल दिया जाता है जिससे गाजर नरम हो जाती है । एक किग्रा मुरब्बा बनाने के लिए एक किग्रा चीनी एक लीटर पानी में घोल कर उबालने के लिए आग पर रख देते हैं। जब इसमें उबाल आ जाय तो इसे सिट्रिक अम्ल से साफ कर लेते हैं।इसके बाद फिर आग पर चढ़ा देते हैं और उसमें गाजर डाल देते हैं। गाजर डालकर इतना पकाते हैं कि रस गाढ़ा हो जाय और उसमें चीनी की मात्रा 70 प्रतिशत तक हो जाय । ठंडा होने पर उसे गाजर के साथ बोतलों में भरकर रख लिया जाता है ।चाशनी में गाजर को लगभग एक घण्टे तक ही पकाना चाहिए ।

टमाटर का सॉस बनाना-

सॉस बनाने की सामग्री -लौंग - 0.5 ग्राम

जवित्री - चुटकी भर

नमक - 11 ग्राम

बड़ी इलायची - 1 ग्राम

ऐसीटिक अम्ल - 3 चाय के चमच्च भर

सोडियम बेन्ज़ोएट - 850 मिली ग्राम

टमाटर का रंग - इच्छानुसार

टमाटर का रस - 1 लीटर

चीनी - 100 ग्राम

अदरक -10 ग्राम

प्याज -15 ग्राम

लहसुन -3 ग्राम

जीरा -1 ग्राम

काली मिर्च - 1 ग्राम

दाल चीनी -1.5 ग्राम

लाल मिर्च -1 ग्राम

बनाने की विधि - इसके लिए स्वच्छ तथा गहरे लाल रंग के टमाटर लेते हैं। इन्हें अच्छी तरह से धोकर स्टेनलेस स्टील के चाकू से चार टुकड़ों में काट कर टुकड़ों को एल्युमिनियम के भगोने में पकाते हैं। अच्छी तरह से गल जाने पर इन्हें स्टील की छलनी में रगड़कर रस निकाल लिया जाता है। रस को एल्युमिनियम के भगौने में पकने के लिए छोड़ देते हैं। अब कुल चीनी का 1/3 भाग रस में मिला कर बारीक कटे लहसुन,प्याज, अदरक व उपर्युक्त मसालों को कपड़े की पोटली में बाँधकर पकते हुये रस में डाल देते हैं। इसे बड़े चम्मच से हिलाते रहते हैं। लगभग एक तिहाई रस रहने पर बची हुयी चीनी एवं नमक डालकर 8-10 मिनट तक फिर पकाते हैं। इसके बाद एसिटिक अम्ल डालते हैं और सोडियम बेंजोएट को थोड़े से पानी में घोलकर मिला देते हैं। अब आवश्यकतानुसार रंग मिलाकर तैयार केचप को साफ बोतलों में गरम-गरम भर देते हैं। बोतलों को सूखे व ठण्डे भण्डारों में रख दिया जाता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगाइये ।

i)फल तथा सब्जियों को बिना खराब हुए अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है -

क)परिरक्षक द्वारा   ख)वास्तविक अवस्था में रखकर

ग)केवल सुखाकर   घ)पकाकर

ii)स्कवैश तैयार किया जाता है -

क)नीबू   ख)केला

ग)सेब   घ)अंगूर

iii)परिरक्षक के रूप में प्रयोग किया जाता है -

क)सोडियम बेन्ज़ोएट ख)पानी

ग)नमक घ)जीवाणु

iv)डिब्बा बन्दी करने हेतु पात्र को भरने से पहले -

क)पानी से धो लेना चाहिए

ख)धूप में रखना चाहिए

ग)खौलते पानी में उबालना चाहिए

घ)पात्र को ठीक से साफ कर लेना चाहिए

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

क)फल तथा सब्जियों को बिना खराब हुए अधिक दिनों तक सुरक्षित रखना...................कहलाता है ।

ख)बैक्टीरिया तथा कवक...................से. ताप पर नष्ट हो जाते हैं ।

ग)फल तथा उससे निर्मित पदार्थ को...................नष्ट कर देते हैं ।

घ)नीबू का स्कवैश तैयार करने के लिए...................फल लेना चाहिए ।

ङ)पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट एक...................है ।

3. निम्नलिखित कथनों में सही पर सही (√) तथा गलत पर गलत (X)का निशान लगाइये ।

क) फल तथा सब्जियों को अधिक दिनों तक बिना खराब हुए सुरक्षित रखना फल परिरक्षण कहलाता है ।

ख) बैक्टीरिया द्वारा फलों को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है ।

ग) कवक, खमीर तथा एन्जाइम द्वारा फल तथा उससे निर्मित उत्पाद खराब हो जाते हैं।

घ) केला से स्कवैश तैयार किया जाता है ।

4.स्तम्भ `क' का स्तम्भ `ख' से सुमेल कीजिए।

स्तम्भ `क'	**स्तम्भ `ख'**
1.मुरब्बा बनाया जाता है ।	1.टमाटर
2.सॉस तैयार किया जाता है ।	2.आँवला
3.मुरब्बा में चीनी की मात्रा	3.पेय पदार्थो पर ही पड़ता है ।
4.खमीर का प्रभाव मुख्य रूप से	4.70 प्रतिशत होती है ।

51)बैक्टीरिया,फल तथा फल पदार्थो को कैसे नष्ट करते हैं ?

2)बोतल बन्दी में पात्र को खौलते पानी में क्यों उबालते हैं ?

3)आँवले का मुरब्बा कैसे बनाया जाता है ?

4)टमाटर का स्कवैश बनाने के लिए किन-किन चीजों की आवश्यकता होती है ?

5)पोटैशियम मेटाबाईसल्फ़ाइट क्या है ? इसके प्रयोग की विधि समझाइये ।

6)नीबू अथवा सन्तरा स्कवैश बनाने की विधि का वर्णन कीजिए ।

7)फल तथा उससे निर्मित पदार्थ किन-किन कारणों से खराब होते हैं ? समझाकर लिखिये ।

back

इकाई - 8 प्राकृतिक आपदाएं

- बाढ़
- सूखा
- भूस्खलन

मानव जीवन का उद्भव और विकास प्रकृति की गोद में होता है। मानव अपने सुख सुविधा के लिए प्रकृति से संसाधन प्राप्त करता है । मनुष्य से प्रकृति की स्वाभविक संरचना प्रभावित होती है । प्राकृतिक साधनों का उपयोग मनुष्य द्वारा जब अत्यधिक किया जाता है तो प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ जाता है और प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन्हें **प्राकृतिक आपदाएं** कहते हैं। इन आपदाओं पर न तो मानव का नियंत्रण होता है और न ही इनका कोई समुचित समाधान होता है । कुछ सावधानियों से इन प्राकृतिक आपदाओं को कम किया जा सकता है पर इन्हें पूर्णत: रोका नहीं जा सकता ।

अपने देश में प्राकृतिक आपदाओं से जन जीवन को बहुत हानि उठानी पड़ती है चूंकि भारत कृषि प्रधान देश है, इसलिए कृषि में काफी क्षति होती है । इससे पूरे देश की अर्थ व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । इस इकाई में हम बाढ़, सूखा और भूस्खलन जैसी मुख्य प्राकृतिक आपदाओं के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

बाढ़

बरसात के मौसम में लगातार भारी वर्षा के कारण नदियों में जल स्तर अचानक बढ़ा जाता है तथा नदी का जल कगारों को पार कर खेत-खलिहान से प्रबल वेग से प्रवाहित होने लगता है। इस प्राकृतिक आपदा को बाढ़ कहते हैं। इससे कृषि एवं बागवानी के साथ-साथ पशुओं आदि को भारी क्षति होती है। बाढ़ का पानी फैल जाने के कारण खरीफ की फसलें नष्ट हो जाती हैं। रबी के फसलों की बुवाई भी समय से नहीं हो पाती है।फलत: उपज कम होती है। इन परिस्थितियों में भारतीय किसान सम्पन्न नहीं हो पाता है। वनों की अन्धाधुन्ध कटाई तथा बड़े-बड़े उद्योगों द्वारा अत्यधिक मात्रा में कार्बन-डाई ऑक्साइड गैस छोड़े जाने के कारण पृथ्वी के तापमान में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। जिससे पहाड़ों की

बर्फ पिघलने लगती है और बाढ़ का कारण बनती है ।बाढ़ से धन जन की हानि होती है । करोड़ों की फसल नष्ट हो जाती है । लोग बेघर हो जाते हैं । देश की आर्थिक स्थिति पर बुरा प्रभाव पड़ता है ।भारत के उत्तरी भाग एवं पूर्व समुद्र तटीय क्षेत ट्रों में प्रति वर्ष लाखों लोग **बाढ़** की चपेट में आते हैं । जिससे इन क्षेत ट्रों में विनाशकारी स्थिति उत्पन्न हो जाती है ।

सूखा

सूखा एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है, जिसके कारण हमारे देश में कृषि की उपज पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। अनावृष्टि,वर्षा की अनिश्चितता एवं असमान वितरण सूखे के प्रमुख कारण हैं। भारत में कृषि प्राय:मानसून पर निर्भर करती है। वर्षा न होने से सूखे की स्थिति पैदा होती है। लहलहाती फसलें खेतों में सूख जाती हैं तथा अकाल पड़ जाता है।

मानसूनी वर्षा होने की प्रारम्भिक तिथि और अन्त होने की तिथि में आनिश्चिता होती है। कभी-कभी सम्भवित समय से एक माह पूर्व वर्षा आरम्भ हो जाती है और इसके समाप्त होने के समय में भी ऐसी ही विसंगति होती हैं। कभी वर्षा का आरंभ और अन्त समय से होता है परन्तु बीच में काफी अन्तर आ जाने से मनुष्य पशु -पक्षी और वनस्पतियाँ दुष्प्रभावित होती हैं। यही कारण है कि कृषकों को खरीफ की फसल का समुचित लाभ नहीं मिलता ।

जाड़े के मौसम में वर्षा से गेहूँ व अन्य फसलों में अच्छी वृद्धि होती है । वर्षा न होने पर असिंचित क्षेत ट्रों में फसलें दुष्प्रभावित होती हैं और उपज घट जाती है। कृषक को लाभ नहीं होता है, जिससे कृषि को वह एक व्यवसाय के रूप में नहीं कर पाता और केवल जीवन यापन की एक प्रणाली के रूप में स्वीकार करता हैं कभी-कभी अत्यधिक हानि होने पर कृषकों द्वारा निराश होकर आत्म-हत्या करने के भी उदाहरण सामने आये हैं ।

सूखे से बचने के लिए और मानसून को अनुकूल दिशा देने के लिए वृक्षारोपण और वनों के संरक्षण की आवश्यकता है । इनके द्वारा वर्षा में वृद्धि की जा सकती है,वर्षा के जल को तालाबों, झीलों और बांधों द्वारा एकत्र करने से भी कुछ हद तक सूखे से सुरक्षा की जा सकती है ।

भूस्खलन

भूस्खलन के अन्तर्गत बड़ी-बड़ी चट्टानें टूटकर निचले ढाल के सहारे गिरती हैं और अनायास ही खतरनाक स्थिति पैदा हो जाती है यदि वहां पर मानव आबादी है तो अत्यधिक क्षति होती है । क्योंकि भूस्खलन में एक साथ चट्टानों का बड़ा भाग टूटकर गिरने लगता है ।

भूस्खलन में अनेक कारण और दशायें एक साथ कार्य करती हैं। ढाल का स्वभाव `**जल रिसाव**' भूकम्पन और चट्टानों की संरचना में विभिन्न पर्तो की स्थिति आदि अनेक कारण

भूस्खलन के लिए उत्तरदायी हैं। कभी-कभी चट्टानों का निचला आधार खत्म हो जाता है तो ऊपरी चट्टानों का ध्वस्त होकर गिरना आवश्यक हो जाता है। कभी-कभी कोयले आदि की खानों से इतनी अधिक मात्रा में खनिज पदार्थो को निकाल लिया जाता है कि उनका आधार समाप्त हो जाता है और वह धसने लगती हैं। वर्षा या बाढ़ आने पर बड़ी-बड़ी नदियों के किनारे भारी मात्रा में कटाव हो जाता है तथा भूस्खलन होता हैं । भूस्खलन और बाढ़ के कारण अलखनंदा घाटी (उत्तरांचल) में सन् 1971 व 1979 के बीच हजारों मनुष्यों व पशुओं की मृत्यु हुई थी तथा वन सम्पदा का विनाश हुआ। उत्तराखण्ड विशेष रूप से भूस्खलन प्रभावित क्षेत्र है, यही कारण है कि वर्षा ऋतु में बद्रीनाथ व केदारनाथ की यात्रा बधित हो जाती है तथा इस क्षेत्र में भूस्खलन से जन-धन की अपार हानि होती है।

भारतवर्ष में राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, और आन्ध्रप्रदेश, विशेष रूप से प्राकृतिक आपदा से दुष्प्रभावित क्षेत्र हैं । इन राज्यों की कृषि सम्पदा और ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था दिनों दिन दयनीय होती जा रही है ।

प्राकृतिक आपदाआें से सुरक्षा के उपाय

प्राकृतिक आपदाआें से शत प्रतिशत बच पाना मनुष्य की क्षमता और शक्ति से बाहर है परन्तु सावधानी रखने से मनुष्य इन आपदाआें से अपने को सुरक्षित रख सकता है । प्राकृतिक आपदाआें से सुरक्षा के उपाय निम्नलिखित हैं :-

1. अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना ।

2. वनों को पर्याप्त संरक्षण देना ।

3. बड़े उद्योगों से निकलने वाली कार्बन -डाई ऑक्साइड गैस की मात्रा घटाना ।

4. आपदाआें के संबंध में मौसम विभाग द्वारा नियमित रूप से सूचना एकत्र करना ।

5. दूरदर्शन,आकाशवाणी और समाचार पत ट्रों द्वारा प्राकृतिक आपदाआें के सम्बन्ध में पूर्व सूचना का भली भांति प्रसारण करना ।

6. सूखा प्रभावित क्षेत ट्रों में बड़े-बड़े बाँध बनवाना और जलाशयों में जल एकत्र करना ।

7. बाढ़ प्रभावित क्षेत ट्रों में नदियों के किनारे बाँध बनाना, बिजली उत्पन्न करना और सिंचाई के लिए नहरें बनाना ।

8. जनता और सरकार के समुचित सहयोग से जन जीवन सुरक्षित व संरक्षित रख सकते हैं तथा आपदाआें से बचा जा सकता है ।

अभ्यास के प्रश्न

1.सही उत्तर पर सही (✓)का निशान लगाइये ।

i. प्राकृतिक आपदाओं के अन्तर्गत आते हैं -

क)बाढ़ ख)भू -स्खलन

ग)सूखा घ)उपरोक्त सभी

ii. बाढ़ प्रभावित क्षेत ट्रों में नदियों के तट पर बनाया जाता है -

क)वृक्षा रोपण ख)बाँध

ग)मेंड़बन्दी घ)उपरोक्त में से कोई नहीं

iii. प्राकृतिक आपदाएं मानव जीवन के लिए हैं -

क)आभिशाप ख)खतरनाक

ग)विनाशकारी घ)उपरोक्त सभी

2. निम्नलिखित में सही पर सही (✓)का निशान तथा गलत पर गलत (X)का निशान लगाइये ।

क) प्राकृतिक आपदा से बचने के लिए पेड़ काटना चाहिए ।

ख) अत्यधिक वर्षा से फसलें सड़ जाती हैं।

ग) भू-स्खलन वन सम्पदा विनाश का कारण होता है ।

घ) भू-स्खलन पहाड़ी क्षेत ट्रों में होता है ।

3.प्राकृतिक आपदा क्यों आती है ?

4.प्राकृतिक आपदा किन-किन रूपों में आती है ?

5.बाढ़ आने के क्या कारण हो सकते हैं ? स्पष्ट कीजिये।

6.सूखा किसानों को किस प्रकार प्रभावित करता है ? वर्णन कीजिए।

7.प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा के क्या उपाय हैं ?

8.भू-स्खलन के क्या कारण हैं ?

प्रोजेक्ट कार्य

यदि आपके आस-पास दैविक आपदा आपके संज्ञान में हो तो उससे होने वाली हानि का आकलन वहाँ के नागरिकों एवं अध्यापक की मदद से कीजिए।

back